रेवरेंड जे.जे.एम.निकोल्स राय

राष्ट्रीय जीवनचरित

रेवरेंड जे.जे.एम.निकोल्स राय

जिला परिषद स्वायत्तता के जनक

पी.आर.किन्डिया

अनुवाद

सौमित्र मोहन

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-3943-5

पहला संस्करण : 2002 (*शक 1924*)

REV. J.J.M. NICHOLS ROY : ARCHITECT OF DISTRICT COUNCIL AUTONOMY (*Hindi*)

रु. 25.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क,
नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित

विषय-सूची

स्मरण एवं समर्पण

उन्होंने एक अच्छा जीवन जिया था और उन्हें प्रतिष्ठित व्यक्तियों की संगत करना पसंद था। वह विद्वान नहीं थे, उन्होंने कोई डिग्री भी हासिल नहीं की थी और लिखना व पढ़ना भी तब सीखा, जब वह अपनी उम्र के तीसरे दशक में थे। लेकिन आश्चर्यजनक रूप से उन्होंने सुंदर व यादगार गीतों व संगीत की रचना की थी। जीवन में खूबसूरत चीजों के लिए उनमें एक अनबुझ प्यास थी। जनजातीय संस्कृति का रखरखाव तथा विकास उन्हें हमेशा प्रिय रहा। इन सबसे अलग वह एक सफल व्यापारी तथा लोकप्रिय व्यक्ति भी थे। वह उन 'चार बड़ों' में से एक थे जिन्होंने प्रसिद्ध जयंतिया उत्सव 'बेह दीन ख्लाम' को ब्रितानी लोगों द्वारा रुकवा दिए जाने का जमकर विरोध किया था। उन्होंने ब्रितानी साम्राज्यवादी प्रशासन के विरुद्ध अनथक संघर्ष किया। वह विरोधी गुटों तथा विचारों को मिलाने की कला में निपुण थे। कोई आश्चर्य नहीं कि महान रेवरेंड जे.जे.एम.निकोल्स राय ने उन्हें अपना विश्वासपात्र बनाया था। वह अब इस दुनिया में नहीं हैं। मैं उनकी सुखद स्मृतियों को संजोए हुए हूं। यह पुस्तक पेटा लालू को समर्पित है, जो मेरे पिता भी थे।

आभार

मैं रेवरेंड डब्ल्यू. मूर लालू का आभार मानता हूं, जिन्होंने मुझसे रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय के बारे में खुलकर तथा विस्तार से अपने अनुभवों को बांटा। मैं श्री एस.डी.डी.निकोल्स राय को विशेष रूप से धन्यवाद देना चाहता हूं कि उन्होंने मुझे साक्षात्कार देने की कृपा की और उनसे प्राप्त जानकारी अत्यंत मूल्यवान साबित हुई। मेघालय विधान सभा के पुस्तकालय में बैठकर मुझे संविधान सभा की बहसों को पढ़ सकने का अवसर प्राप्त हुआ। मैं वहां के अधिकारियों तथा संबद्ध स्टॉफ को सदा याद रखूंगा क्योंकि उन्होंने मेरे काम में प्रशंसनीय सहयोग दिया।

अनेक मित्रों तथा शुभाकांक्षियों को जब यह पता लगा कि मैं रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय पर एक पुस्तक लिख रहा हूं, तो उन्होंने सहर्ष उनके काम तथा जीवन के बारे में अनेक जानकारियां स्वेच्छा से दीं। मैं उन सबका आभारी हूं। मेरे पुत्र वाइभा के. किन्डिया ने पुस्तक की पांडुलिपि को बड़े मनोयोग से पढ़ा और अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिए। मैं इसकी भी प्रशंसा करता हूं।

– पी.आर.किन्डिया

भूमिका

वे कार के अंदर एक संभ्रांत तथा संपन्न व्यक्ति की तरह बैठे दिखाई दिए। उनका चेहरा गंभीर, निर्द्वंद्व, पुरुषोचित लेकिन सौम्य दिखाई दे रहा था। मैं उनकी मुखाकृति तथा मुद्रा को देखकर मन ही मन विस्मित हो रहा था। तब मैं मुश्किल से छह बरस का रहा होऊंगा। "बाह जॉय !" मैं निःशब्द चिल्लाया था। लेकिन मेरे साथ का एक दोस्त अपने मन की बात प्रकट करने की नीयत से खुलकर चिल्लाया, "बाह जॉय !" उसकी नजरें कार में बैठी गोरी अमेरिकी महिला, श्रीमती निकोल्स राय, पर टिकी हुई थी। कितनी सुंदर महिला थी वह ! कार धीमी गति से शिलांग के क्वालापट्टी इलाके की तरफ निकोल्स राय के घर 'माउंटेन व्यू' की तरफ बढ़ रही थी। 'बाह जॉय', रेवरेंड जे. जे. एम. निकोल्स राय, वहां की सरकार के मंत्री से यह मेरा पहला सामना था। छावनी का पल्टन बाजार, जहां हम लोग रहते थे, क्वालापट्टी से लगा हुआ इलाका था। जब मैं क्वालापट्टी के एक स्कूल में पढ़ने के लिए जाने लगा तो अक्सर इन दोनों को वहां देखता हालांकि ज्यादातर वे अकेले ही दिखाई देते थे।

लगभग एक दशक बाद बस्ती में लगी एक भयंकर आग में पल्टन बाजार वाला हमारा घर जलकर स्वाहा हो गया था; तब मैं अपने मामा के यहां क्वालापट्टी में रहने चला गया। हमारा परिवार राजनीतिक दृष्टि से बहुत सक्रिय था और हमारे यहां परस्पर बातचीत का मुख्य विषय भी अक्सर कांग्रेस द्वारा भारत को आजाद करवाने की रणनीति होता था। इस तरह के वातावरण में रहने के कारण मैं राजनीतिक घटनाओं में बहुत अधिक दिलचस्पी लेता–खासकर अंग्रेजों के चंगुल से भारत को स्वतंत्र करवाने संबंधी गतिविधियों में। हमारे परिवार के सदस्य हमेशा सी.आई.डी. तथा गुप्तचरों की निगाहों में रहते थे। मेरे मामा, स्वर्गीय वेलसन राय किन्डिया, जो 1930 और 1940 के दशकों में कांग्रेस पार्टी के जिला महामंत्री थे, को इस तरह की पूछताछ का अक्सर शिकार होना पड़ता था। मुझे आज भी याद है कि 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान सादे कपड़ों में पुलिस वाले हमारे पल्टन बाजार

वाले घर छापा मारने आए थे कि शायद राष्ट्रीय नेताओं से संबंधित दस्तावेज तथा फोटो उनके हाथ लग जाएं ! सौभाग्य से हमें इस छापे की खबर एक दिन पहले ही लग गई थी और हमने महात्मा गांधी, सुभाष चंद्र बोस, जवाहरलाल नेहरू के फोटो और कांग्रेस पार्टी से संबंधित फाइलें व दस्तावेज कहीं सुरक्षित छिपा दिए थे। हमें फंसाने के मामले में पुलिस को मुंह की खानी पड़ी थी।

भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान रेवरेंड निकोल्स राय खुलकर सामने नहीं आए थे। शायद उन दिनों वे चर्च के कामों में बहुत अधिक व्यस्त थे लेकिन मैं ऐसा निश्चित तौर पर नहीं कह सकता। वे चर्च संबंधी काम से 1943 में अमेरिका गए थे और 1945 में वापस लौटे। अब तक मैं उनके काफी नजदीक आ चुका था और दिसंबर 1945 में जब पंडित जवाहरलाल नेहरू शिलांग पधारे तो वे रेवरेंड निकोल्स राय के अतिथि के रूप में हमारे ही मोहल्ले में आए थे। उन दिनों मैं रेवरेंड के यहां एक राजनीतिक कार्यकर्ता के रूप में काम कर रहा था। सन् 1942 तथा बाद के वर्षों में स्वतंत्रता संघर्ष से जुड़े रहने की वजह से मैं अपने कुछ युवा नेताओं के साथ स्वतंत्रता-संग्राम की गतिविधियों को तेज करने की नीयत से 1946 में दिल्ली आया था। उस समय भी हम में से अनेक अंग्रेजों का विश्वास नहीं करते थे क्योंकि वे अपने वायदे से मुकर सकते थे और ऐसा वे पहले भी कई बार कर चुके थे।

दिल्ली से लौटकर मैं रेवरेंड निकोल्स राय के चुनाव-प्रचार में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने लगा। वे कांग्रेस पार्टी के उम्मीदवार थे और आसानी से चुनाव जीत गए थे।

मैं रेवरेंड निकोल्स राय की राजनीति की तरफ खिंचता चला गया। पहली बात तो यह कि मैं उनके ज्ञान तथा उदार दृष्टिकोण के प्रति बहुत आकर्षित हुआ था। यद्यपि वे स्वयं एक देशभक्त 'खासी जनजाति' के व्यक्ति थे, फिर भी, वे संपूर्ण भारत के कल्याण के प्रति समर्पित थे। दूसरे, असम के पूरे इलाके, जो उन दिनों का उत्तर-पूर्वी क्षेत्र था, में जनजातीय अस्मिता को स्थापित करने को लेकर उनका दृष्टिकोण बहुत स्पष्ट, साहसपूर्ण और वहां की जनता की आकांक्षाओं का प्रतिबिंब था। तीसरे, उनकी नीतियां निश्चित मूल्यों तथा नैतिकता पर आधारित थीं तथा अपने राजनीतिक अहित के बावजूद वे इनसे कभी डिगे नहीं। मुझे याद है कि वे शराब पीने के खिलाफ थे। उनकी एक चुनाव सभा में जब कुछ पियक्कड़ों ने हुड़दंग किया तो उन्होंने इन्हें खूब झाड़ पिलाई। उन्होंने कहा था कि मुझे शराबियों के वोट नहीं चाहिए और उन्होंने यदि मुझे वोट दे भी दिए तो उनकी गिनती नहीं की जाएगी। उनकी राजनीतिक नैतिकता की जड़ें बहुत गहरी थीं। वे मानते थे कि जनसेवा एक पवित्र काम है। उनकी जनसेवा में सामाजिक, आर्थिक तथा आध्यात्मिक सेवा भी शामिल थी। चौथे, हम लोग आदर्शवादी तो थे ही, रेवरेंड निकोल्स

राय को अपने अधिकारों के लिए लड़ने वाला तथा भविष्य में हमें उचित स्थान दिलाने वाला योद्धा भी मानते थे। हमें उनके नेतृत्व तथा समझदारी पर विश्वास था। पांचवें, तत्कालीन राष्ट्रीय नेताओं, विशेषरूप से महात्मा गांधी तथा पंडित नेहरू, के नजदीक होने की वजह से हम उनके प्रति आश्वस्त थे। हम लोग राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़े होने के गर्व से भर जाते थे क्योंकि उन दिनों नवयुवकों के मन में इस आंदोलन से जुड़ने की भावना सर्वोपरि थी।

पंडित नेहरू असम के पहाड़ी क्षेत्रों की विशिष्ट राजनीतिक स्थिति को समझते थे और रेवरेंड निकोल्स राय के इस सुझाव से सहमत थे कि खासी-जयंतिया पहाड़ियों की एक क्षेत्रीय पार्टी का 'खासी-जयंतिया नेशनल कांफ्रेंस' के नाम से गठन किया जाए और इसे कांग्रेस पार्टी से संबद्ध कर दिया जाए। मैं कांफ्रेंस में शामिल हो गया और 1952 के आम चुनाव के बाद, जिसमें मेरी भी महत्वपूर्ण भूमिका रही थी, पार्टी का संयुक्त मंत्री चुन लिया गया। रेवरेंड निकोल्स राय, जो भारी बहुमत से संसदीय चुनाव जीते थे, पार्टी के अध्यक्ष तथा आरोन ऐले महामंत्री चुने गए। अब मुझे रेवरेंड निकोल्स राय को नजदीक से समझने का अवसर मिला। उनकी सामाजिक, राजनीतिक और आध्यात्मिक दुनिया मेरे सामने स्पष्ट होने लगी। वे मेरे साधारण से घर में अक्सर आया करते थे। हम लोग राजनीति तथा नैतिकता पर खूब जमकर चर्चा करते। तब मुझे अनुभव हुआ कि वे लोगों के चरित्र-निर्माण, विशेषकर नवयुवकों के चरित्र-निर्माण, को लेकर बहुत गंभीर थे क्योंकि उनका मानना था कि इस वर्ग को जनहित के मामलों में कहीं अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। आज हम जिसे विकास कार्य कहते हैं, उनके मूल्यों की सूची में तब वह बहुत नीचे था। उनमें संगठन के कार्य के असाधारण गुण थे और उन्होंने सच्चरित्र पुरुष तथा महिलाओं को ही अपना विश्वासपात्र बनाया था। उनके पूरे जनसेवा कार्य में जो बात सबसे ज्यादा आकर्षित करती है, वह है उनके व्यक्तित्व में प्रवाहित होने वाली नैतिकता की सदानीरा और साथ ही यह भी कि उनके चरित्र को लेकर कभी कोई संदेह नहीं उपजा।उनमें अकूत ऊर्जा थी। वे मुश्किल से चार-पांच घंटे सोते और अपना अधिकतर समय विचार करने, ध्यान करने और लिखने में बिताते थे। वे हर तरह की विचारधारा के लोगों से मिलने को सदैव तत्पर रहते थे। वे बहुत कुशल वक्ता माने जाते थे और अपनी वक्तृत्व शैली में बेजोड़ थे। काम के प्रति, कठोर काम के प्रति, उनके समर्पण-भाव को देखकर मैं आश्चर्यचकित होता रहता था। वे बहुत ही अनुशासनप्रिय व्यक्ति थे और अपना जीवन जनता व मानवता की सेवा में बिताते थे। मैं आज भी उनकी अकूत ऊर्जा, अपने युग की समस्याओं को सुलझाने में उनकी बौद्धिक एकाग्रता

तथा आम आदमी को सरल भाषा में अपने विचारों को समझा पाने की कुशलता का स्मरण कर हैरान रह जाता हूं।

जनता की सेवा का सही अर्थ मैंने उन्हीं से सीखा था। उत्तर-पूर्व क्षेत्र के पहाड़ी इलाकों में जनजातीय हितों को सुरक्षित करने का उनका संघर्ष अंततः स्वायत्त जिला परिषदों के गठन में हुआ जिसे संविधान की छठी अनुसूची में शामिल कर लिया गया था। यह बात बिना किसी संदेह के कही जा सकती है कि वे जनजातियों को स्वायत्तता दिलवाने के विचार के मुख्य प्रेरक थे और उनके कल्याण के लिए उन्होंने तत्काल किसी भी नेता की तुलना में कहीं अधिक श्रम किया था। स्वायत्त जिला परिषद के जनक होने के नाते उन्होंने संविधान-निर्माण के इतिहास में अपने लिए एक विशिष्ट स्थान बना लिया है।

यह पुस्तक लोगों की सेवा में समर्पित उनके जीवन के प्रति श्रद्धांजलि स्वरूप लिखी गई है। मुझे यह स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं कि यह पुस्तक उनके जनसेवा के कामों को आंशिक रूप से ही प्रस्तुत कर पाई है क्योंकि यह भारत की संविधान सभा में उनकी विशिष्ट भूमिका तथा संविधान में छठी अनुसूची को शामिल करवाने में उनके सत्प्रयासों को केंद्र में रखकर लिखी गई है। मैंने उनके जीवन के कुछ महत्वपूर्ण पक्षों, जैसे कि जननेता होने तथा चर्च के काम में उनके योगदान की भी चर्चा की है। मैं अच्छी तरह जानता हूं कि इस पुस्तक में उनके जनसेवा के महान काम का विश्लेषण पूरी तरह से नहीं हो सका है, जो वस्तुतः उनका वास्तविक परिचय है। संभवतया आने वाले समय में इस अनूठे व्यक्तित्व व आधुनिक भारत के निर्माता की समग्र जीवनी कोई लिख पाएगा। मैं यह बात अच्छी तरह समझता हूं कि हम लोगों को आज राजनीति तथा अन्य क्षेत्रों में जो भी स्थान प्राप्त है, वह उनके बिना पा सकना संभव नहीं हो पाता।

1

भारत हमारा घर है

मैं एक मानव हूं, और मानवता के जो भी सरोकार हैं, उनमें मेरी दिलचस्पी है ।

– **टेरेन्स**

विवाद जोर पकड़ रहा था और कुछ ही घंटों में यह अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच गया । दिल्ली में 6 सितंबर 1949 को भारत की संविधान सभा की अध्यक्षता भारत के राष्ट्रपति महामहिम डा. राजेंद्र प्रसाद कर रहे थे । विचारणीय विषय संविधान के मसौदे में छठी अनुसूची को शामिल करने के बारे में था । कई मेधावी तथा तेज-तर्रार वक्ता इसमें भाग ले चुके थे । अब रेवरेंड जेम्स जॉय मोहन निकोल्स राय की बारी थी, जो छठी अनुसूची के मुख्य निर्माता और असम (संपूर्ण उत्तर पूर्वी क्षेत्र) के एकमात्र सदस्य थे व पहाड़ी क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे । वे स्पष्टता बचाव करते दिखाई दे रहे थे । पर जब उन्होंने बोलना शुरू किया तो कुछ ही मिनटों में सभा का वातावरण उनकी वक्तृता, तर्क, उदार दृष्टिकोण तथा प्रतिबद्धता से सराबोर हो उठा । सभी सदस्य उनके मुंह से निकलने वाले प्रत्येक शब्द को बहुत ध्यान से सुन रहे थे । निस्संदेह यह एक यादगार दिन था ।

संविधान सभा में अपना भाषण शुरू करने से पहले रेवरेंड निकोल्स राय के दिमाग में वे तीन रोचक तथा मार्मिक अनुभव जरूर घूम गए होंगे, जो हाल ही के वर्षों में उन्हें हुए थे । पहला, 1943 से 1945 के बीच उनकी आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका की यात्रा । अमेरिका-प्रवास के दौरान उन्हें विश्व के घटनाचक्र में होने वाले इस परिवर्तन को नजदीक से देखने का अवसर मिला था कि कैसे मित्र-राष्ट्रों ने परस्पर संधि को झुठलाकर 1945 में सानफ्रांसिस्को में विश्व कांफ्रेंस का आयोजन किया जिसके परिणामस्वरूप वहां संयुक्त राष्ट्र संघ का जन्म हुआ । संयुक्त राष्ट्र संघ का अधिकारपत्र (चार्टर) 25-26 अप्रैल, 1945 को हुई इसी ऐतिहासिक सानफ्रांसिस्को कांफ्रेंस में प्रस्तावित तथा हस्ताक्षरित हुआ और विजेता देशों,

मित्र-राष्ट्रों जैसे कि चीन, फ्रांस, अमेरिका तथा अन्य देशों ने इसे अपनी स्वीकृति दी थी। निकोल्स राय ने अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के क्षेत्र में विश्व शक्तियों के परस्पर आदान-प्रदान तथा विशेषरूप से अमेरिका द्वारा भारत के स्वतंत्रता संग्राम के प्रति प्रकट उदार रवैये को गहरी दिलचस्पी से देखा था। उन्होंने तत्कालीन भारतीय नेताओं महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू तथा अन्यों के प्रति विश्व नेताओं के आदरसूचक रवैये को भी गौर से देखा था। निस्संदेह हवा का रुख भारत की शीघ्र स्वाधीनता के पक्ष में था। अमेरिका के राष्ट्रपति फ्रेंकलिन रूजवेल्ट ने निस्संकोच भारत के पक्ष का समर्थन किया था। रेवरेंड निकोल्स राय ने भी विदेश में प्रेम, अहिंसा तथा भारतीय राष्ट्रवाद को फैलाने में विशिष्ट भूमिका निभाई थी। अमेरिका में दिए गए उनके भाषणों में गांधी जी की विचारधारा की छाप साफ देखी जा सकती थी।

दूसरा, 3 नवंबर 1945 को जैसे ही रेवरेंड निकोल्स राय भारत लौटे तो तत्कालीन प्रमुख भारतीय नेताओं से संपर्क साधने में उन्होंने बिल्कुल समय नष्ट नहीं किया। विशेषरूप से जवाहरलाल नेहरू से उनकी व्यक्तिगत घनिष्ठता बहुत अधिक थी। दिसंबर 1945 में जब वे शिलांग पधारे थे तो वे निकोल्स राय के क्वालापट्टी के 'माउंटेन व्यू' घर में ही ठहरे थे। दोनों की आपसी बातचीत के बाद ही इन नेताओं में पहाड़ के लोगों तथा भारत के संबंधों के बारे में एक परस्पर मान्य धारणा बनी थी। उत्तर-पूर्वी क्षेत्र के पहाड़ी इलाकों के भविष्य के बारे में प्रच्छन्न और गोपनीय राजनीतिक चालों के बारे में चिंता जताई गई थी। इन दोनों नेताओं ने राजनीतिक दृष्टि से ज्वलंत विषयों पर भी बातचीत की थी।

पहली चाल तो यह थी कि एक संरक्षित राज्य बनाया जाए जिसका नाम हो 'उत्तर-पूर्वी सीमांत संरक्षित राज्य' (नार्थ ईस्टर्न फ्रंटियर प्रोटेक्टोरेट) और इसमें खासी और जयंतिया पहाड़ियां (खासी रियासतों सहित), असम के अन्य पहाड़ी क्षेत्र, मणिपुर रियासत और सीमांत पार के बर्मा तक के इलाके शामिल रहें। इस संरक्षित राज्य का स्वरूप एक औपनिवेशिक बस्ती (क्राउन कालोनी) के रूप में सोचा जा रहा था जिसका सीधा संबंध ब्रिटेन से रहेगा।

यह गुप्त योजना असम सरकार के कुछ अधिकारियों ने बनाई थी। इसका उद्देश्य एक ऐसे नए संप्रभुता संपन्न देश का निर्माण करना था जिस पर राजनीतिक तथा आर्थिक संरक्षण ब्रिटेन का हो और शेष भारत से उसका कोई संबंध न हो। अधिकारियों ने यह योजना बड़े श्रम से विस्तारपूर्वक बनाई थी और शायद ही कोई नेता इसका विरोधी था। यह बात याद रखनी चाहिए कि उस समय, विशेषकर जनजातियों में, गोरों के प्रति विशेष आकर्षण का भाव व्याप्त था जो 'साहेप' कहलाते

थे। इनको बहुत सम्मान दिया जाता था। यह बात भी माननी होगी कि इन गोरों में से कुछ चरित्र, न्याय तथा अनुशासन के मामले में बहुत ऊंचे थे।

उन दिनों कुछ कबीलों के मन में गोरे शासकों के प्रति यह सम्मान चाटुकारिता की हद तक समाया हुआ था। जिन क्षेत्रों के लोग शिक्षा तथा आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए थे, वहां कुशल प्रशासन के मामले में अंग्रेजों को विशेष महारत हासिल थी। अंग्रेजों ने 'गाजर और लकड़ी' की पद्धति (झूठ-मूठ ललचाने की पद्धति) अपनाई हुई थी और उन्होंने ऐसे अनुयायियों का एक गुट भी बनाया हुआ था, जो उनकी हर सनक तथा इच्छा को पूरा करने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। "गोरे शासक कभी अन्याय नहीं करते" – यह बात जनजातियों की चेतना में समाई हुई थी। इस तरह उन्हें अपनी रणनीति में भरपूर सफलता मिल रही थी। लेखक को याद है कि 1930 और 1940 के दशक में जब कोई 'साहेप' शिलांग की सड़कों पर जा रहा होता तो स्थानीय लोगों से अपेक्षा की जाती थी कि वे उसे 'सेल्यूट' करें तथा उसके प्रति सम्मान प्रकट करें। 'साहेप' या गोरे शासक भी हमेशा इस बात का ध्यान रखते थे कि उचित अवसर तथा स्थान पर उदारतापूर्वक दान-दक्षिणा देकर जनजातियों को यह जता दिया जाए कि उनके असली संरक्षक वे ही लोग हैं।

अतएव जब ब्रितानी संरक्षित राज्य की योजना उजागर हुई तो कुछ नेता सचमुच उल्लास से भर उठे थे। उनका सोचना था कि काले शैतान से गोरा शैतान कहीं अधिक अच्छा होगा।

सौभाग्यवश रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय को इस गुप्त योजना की भनक लग गई और उन्होंने जवाहरलाल नेहरू की मदद से इसे तभी कुचल दिया। इस खतरनाक चाल के बारे में, बिना किसी संकोच के, रेवरेंड निकोल्स राय ने ब्रितानी संसदीय शिष्टमंडल के अध्यक्ष को एक ज्ञापन दिया। यह शिष्टमंडल एक महीने बाद आया था। अपने ज्ञापन में उन्होंने लिखा था :

> "कुछ समय से सुनने में आ रहा है कि असम के कुछ अधिकारी एक गुप्त योजना बना रहे हैं ताकि मेरा जिला, खासी और जयंतिया पहाड़ियां, भारत से अलग हो जाएं। वे इसे एक संरक्षित राज्य बनाना चाहते हैं जिसका नामकरण 'उत्तर-पूर्वी सीमांत संरक्षित राज्य' किया जाएगा और इसमें असम की सभी पहाड़ियां, मणिपुर रियासत और खासी रियासत तथा बर्मा तक का परासीमांत भूखंड शामिल रहेंगे।
>
> "इस गुप्त योजना की जानकारी वस्तुतः कुछ ही अधिकारियों को है। यह योजना प्रकाशित नहीं की गई है ताकि हम लोग इसके ठीक-ठीक प्रयोजन को समझ नहीं सकें।

"हमें पता चला है कि यह संरक्षित राज्य ब्रिटेन का एक उपनिवेश होगा जिसका संचालन राजनीतिक अधिकारी करेंगे और यह अ-विनियमित क्षेत्र (अनरेग्यूलेटिड एरिया) होगा। मैं तथा मेरे देशवासी स्पष्ट रूप से ऐसी योजना का विरोध करते हैं, जो हमारे जिले को असम प्रांत तथा भारत से विलग करती है। मैं कल्पना भी नहीं कर सकता कि कोई अच्छा तथा नेकनीयत ब्रिटेनवासी हमारे साथ ऐसा व्यवहार करना चाहेगा।"

दूसरी चाल यह थी कि खासी और जयंतिया पहाड़ियों के लोगों को पाकिस्तान में शामिल होने के लिए उकसाया जाए। मुस्लिम लीग ने बंगाल, कछार जिला, खासी और जयंतिया पहाड़ियों तथा गोआलपारा को पाकिस्तान में शामिल करने की एक शानदार योजना बनाई थी। वस्तुतया 6 और 7 जुलाई, 1947 के एक जनमत-संग्रह में इसने सिल्हट जिले के अधिकांश भाग को अपनी तरफ कर लिया था। पूर्वी बंगाल तो उसकी मुट्ठी में पहले ही से था। फिर भी लीग संतुष्ट नहीं हुई और कछार, खासी व जयंतिया पहाड़ियां और गोआलपारा को पूर्वी पाकिस्तान में शामिल करने की मांग बार-बार करती रही।

यह याद दिलाना काफी रोचक होगा कि प्रधानमंत्री गोपीनाथ बारदोलोई को पता चला कि लीग की आंख शिलांग पर टिकी है, जो ब्रिटिश साम्राज्य के हिल स्टेशनों बल्कि पूरे विश्व में एक अत्यंत सुंदर हिल स्टेशन माना जाता था। बारदोलोई जब वायसराय माउंटबेटन से मिले तो उन्होंने इनसे असम की राजधानी शिलांग के बारे में बातों-बातों में पूछा था कि यह कहां है। बारदोलोई को हैरानी हुई थी पर वे चुप रहे।

बारदोलोई की चिंता बढ़ी कि रेडक्लिफ मिशन कहीं लीग की मांग स्वीकार न कर ले। उन्होंने महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल और रेवरेंड जे. जे.एम. निकोल्स राय को जानकारी देते हुए लार्ड माउंटबेटन से एक और मुलाकात की। यह मुलाकात नई दिल्ली के इम्पीरियल होटल में हुई थी। जब ये दोनों अकेले रह गए तो लार्ड माउंटबेटन ने बारदोलोई को विश्वास में लेते हुए बताया था कि मुस्लिम लीग कछार, खासी और जयंतिया पहाड़ियां और गोआलपारा को लेने की जोरदार कोशिश कर रही है लेकिन उन्होंने यह भी कहा था कि वे इन क्षेत्रों को पूर्वी बंगाल में मिला दिए जाने की लीग की मांग को स्वीकार नहीं करेंगे।

इस मुलाकात के बहुत समय बाद उन्होंने 1948 (19 अप्रैल) में कलकत्ता से वल्लभभाई पटेल को पत्र लिखकर अपनी चिंता जताई थी कि मुस्लिम लीग खासी तथा जयंतिया पहाड़ियां और अन्य पहाड़ी इलाकों को पूर्वी पाकिस्तान में मिलाने के लिए जोरदार प्रचार कर रही है।

अतएव एक बहुत गहरी साजिश रची जा रही थी कि किसी तरह पहाड़ी क्षेत्रों के निवासी पाकिस्तान में शामिल होने की मांग करने लगें । सौभाग्यवश राष्ट्रवादी चरित्र, दूरदर्शिता तथा स्थिति की सही समझ के तहत जवाहरलाल नेहरू तथा रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय ने मिलकर राजनीतिक दृष्टि से इस खतरनाक चाल को नाकाम कर दिया और ये पहाड़ी क्षेत्र भारत का अंग बने रहे । सबसे बड़ी बात तो यह है कि रेवरेंड निकोल्स राय ने अपने भारतीय राष्ट्रवादी होने का भरपूर सबूत पेश किया था ।

रेवरेंड निकोल्स राय ने अपने राष्ट्रवादी होने व वास्तविक नेतृत्व का परिचय उस समय भी दिया, जब ब्रिटिश संसदीय शिष्टमंडल शिलांग आने वाला था । वह शिष्टमंडल से शिलांग में मुलाकात तो नहीं कर सके थे लेकिन उन्होंने 29 जनवरी 1946 के एक ज्ञापन में पहाड़ी क्षेत्रों के लोगों के डर तथा महत्वाकांक्षाओं को वाणी दी थी । उनके ज्ञापन का सार इस एक वाक्य में देखा जा सकता है । यह वाक्य था : "हमारी महत्वाकांक्षा भारत के साथ रहने की है ।"

सन् 1946 एक महत्वपूर्ण वर्ष था । आम चुनाव 9 जनवरी 1946 को हुए थे । कांग्रेस को 103 सदस्यों के सदन में 63 सीटें प्राप्त हुई थीं । शिलांग निर्वाचन क्षेत्र से तीन सदस्यों ने चुनाव लड़ा था – कांग्रेस पार्टी की ओर से रेवरेंड निकोल्स राय ने, खासी जयंतिया पालिटिकल एसोसिएशन की ओर से अजरा सिंह खङ्फाई ने तथा स्वतंत्र सदस्य के रूप में मेक्डोनाल्ड कङ्गोर ने । रेवरेंड निकोल्स राय की भारी बहुमत से जीत हुई थी । 11 फरवरी 1946 को नए कांग्रेस केबिनेट ने शिलांग में सत्ता संभाली और गोपीनाथ बारदोलोई इसके नेता बने थे । इस केबिनेट के नौ सदस्यों में रेवरेंड निकोल्स राय भी शामिल थे ।

असम असेंबली 16 जुलाई 1946 को बुलाई गई थी और इस पर संविधान सभा में असम का प्रतिनिधित्व करने वाले दस सदस्यों का चुनाव करने का दायित्व सौंपा गया था । चुने गए सदस्यों में से प्रमुख थे गोपीनाथ बारदोलोई, सर सैय्यदुल्ला, रोहिणी चौधरी, बसंत कुमार दास और रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय । विधानसभा में पारित एक प्रस्ताव के द्वारा प्रतिनिधियों को असम प्रांत के लिए सोचे जा रहे समूह संविधान को रद्द करने का अधिकार दिया गया और कहा गया कि उन्हें केंद्रीय संविधान के निर्माण एवं असम के संविधान को अंतिम रूप देने पर ही अपनी पूरी शक्ति लगानी है । प्रतिनिधियों को पूरी तरह से यह स्पष्ट कर दिया कि समूह संविधान के लिए उन्हें किसी भी तरह राजी नहीं होना है; उन्हें इस प्रस्ताव द्वारा पूर्ण रूप से उपर्युक्त विचार को लागू करवाने के लिए बाध्य कर दिया गया था । रेवरेंड निकोल्स राय ने यह घोषणा

कर अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी थी कि वह असम के पहाड़ी क्षेत्रों की पूर्ण स्वायत्तता के हामी हैं ताकि पहाड़ी क्षेत्रों के लोगों को एक प्रकार का स्वशासन प्रदान किया जा सके।

रेवरेंड निकोल्स राय द्वारा 6 सितंबर 1949 को संविधान सभा में दिया गया भाषण स्मरणीय था। यद्यपि उनका भाषण जनजातीय लोगों के हित को लेकर था, फिर भी, उन्होंने मेलमिलाप के सिद्धांत का ही प्रतिपादन किया और यह भी कि प्रेम, परस्पर सहयोग तथा समझदारी से इस मनमुटाव को दूर किया जा सकता है। उन्होंने जोरदार शब्दों में कहा था, "मैं हर जगह वैश्विक भाईचारा चाहता हूं। मैं समूचे भारत तथा जनजातीय लोगों में भी इसका प्रतिफलन चाहता हूं।" उनका व्याख्यान सार्वजनीनता तथा मनुष्यमात्र में परस्पर भाईचारे को प्रतिबिंबित करता था। उन्होंने अपनी बात को स्पष्ट करते हुए कहा, "मैं सभी लोगों की उन्नति के उच्च आदर्श को ध्यान में रखकर यह बात कह रहा हूं।" रेवरेंड निकोल्स राय ने भारत की अंतश्चेतना को छुआ था और सदन उनकी बात पूरी एकाग्रता तथा शांति से सुन रहा था। वह ऐतिहासिक अनिवार्यता का बयान कर रहे थे। वस्तुतः उन्होंने कहा था, "भारत हमारा घर है।"

स्वयं खासी जाति का होने के कारण वह अपने अतीत को याद कर रहे थे, वे स्वतंत्र होने की आकांक्षा से युक्त तथा हर तरह की कठिनाइयों से लड़ने के लिए तत्पर थे। अतीत उनके दिमाग में घुमड़ रहा था ...

2

ईश्वर की प्रेम-संतान

ईश्वर ही हमारी सभी इच्छाओं का ध्येय, हमारी सभी क्रियाओं का साध्य, हमारे सभी प्रकार के स्नेह का सिद्धांत और हमारी आत्माओं की नियंता-शक्ति होना चाहिए।

–मेस्सिलों

यह 12 जून 1897 की बात है। पहले तो कुछ खड़खड़ाहट, हल्की-सी कंपन हुई और फिर समाप्त हो गई। किसी ने भी इस तरफ ध्यान नहीं दिया। लगभग एक घंटे के बाद गांव एक जोरदार झटके से हिल गया; क्योंकि तुरंत यह शांत हो गया, इसलिए किसी ने भी इस पर फिर ध्यान नहीं दिया। पहाड़ों में इस तरह के झटके अक्सर आते रहते हैं और गांववासी आदतन एक सामान्य-सी बात मानकर इस ओर ध्यान नहीं देते।

पर इसके बाद की शांति बड़ी डरावनी थी। गांववासी फुसफुसाकर बातें करने लगे। गांव के कुत्ते जोर-जोर से भौंकने लगे। जंगल में चिड़ियां अपने घोंसलों से उड़ने लगीं और गांव के मुर्गों ने घबराकर अपनी गर्दनें लंबी कर लीं और बांग देने लगे। घरेलू बिल्लियां तक बेचैन होकर घूमने लगी थीं। सभी तरफ एक अजीब-सी बेचैनी फैल गई थी।

अचानक एक जोरदार झटका लगा, धरती कांपने लगी और मकान हिचकोले खाने लगे। कुछ सेकेंड के बाद झटके रुक गए। लोगों को भूचाल आने का अहसास हो चुका था। तभी मकान और जोर से हिचकोले खाने लगे। धरती के नीचे कहीं दूर होने वाली गड़गड़ाहट सुनाई दे रही थी। फिर मकान ऐंठन के साथ टूटने लगे। लोग धरती पर आ गिरे और जो अपने को संभाल पाए, वे बाहर भाग आए। इनमें चौदह साल का एक लड़का जॉय मोहन राय भी था।

जो जिंदा थे, वे डर के मारे कांपने लगे। गांववासी यहां-वहां छितरा गए। कुछ ही सेकेंडों बाद ऊपर उठी पहाड़ियों में गड़गड़ाहट हुई और वे दो फांक हो गईं। बहुत-से

लोग पहाड़ियों के नीचे आते मलबे में दब गए। गांव की धरती भी फट गई और सपना देखने की तरह रोते-चिल्लाते लोगों के साथ-साथ मकान भी फटी धरती में समा गए।

जॉय मोहन राय का भाई भी ऐसे ही एक खड्डे में छाती तक धंस चुका था। जॉय मोहन राय ने पूरी ताकत लगाकर उसे बाहर खींचने की कोशिश की लेकिन खड्ड तब तक भर चुका था। लेकिन तभी किसी चमत्कार की तरह वह खड्ड दोबारा खुल गया और उन्होंने अपने भाई को सुरक्षित बाहर निकाल लिया।

सभी जगह बचे हुए लोग चिल्ला रहे थे, चीख और रो रहे थे। कुछ ही मिनटों में एक समृद्ध गांव गायब हो चुका था। यहां के संतरों के बगीचों को धरती निगल गई थी। कुछ मकानों के खंडहर ही बचे थे, जो गांववासियों के दुस्वप्न के सबूत थे।

बचे हुए गांववासी एक जगह इकट्ठे हो गए ताकि आपस में मिलकर ताकत पा सकें और एक-दूसरे को सांत्वना दे सकें। उनका दिशाबोध तक खत्म हो गया था। बारिश और अंधेरा ही उनके दोस्त थे।

जॉय मोहन राय तो जैसे पथरा गए थे। उनके कानों में केवल इन बचे हुए लोगों के रोने-चिल्लाने की आवाजें तथा बचाने के लिए ईश्वर से की जा रही प्रार्थनाएं ही जा रही थीं। इनमें हिंदू, मुसलमान, खासी, कुछ ईसाई खासी भी, थे और सभी मार्गदर्शन व सुरक्षा के लिए ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे। मानसिक आघात से पीड़ित नवयुवक ने तब ये प्रश्न पूछने शुरू किए : "सच्चा ईश्वर कौन है ? लोग विध्वंस, विपत्ति या फिर कठोर संकट के समय खुद के बचाव के लिए ईश्वर से प्रार्थना क्यों करते हैं ?"

मानसिक आघात पहुंचाने वाले भूचाल के अनुभवों, इसके विध्वंसक प्रभावों के फलस्वरूप लोगों की कठिनाइयों और कष्टों को देखकर युवा जॉय मोहन राय के मन पर गहरा असर हुआ। वे इस महाविपत्ति को जितना भूलने की कोशिश करते, उतना ही अधिक उन्हें इसकी याद हो आती। दिन सप्ताह में और सप्ताह महीनों में बदल गए लेकिन भूचाल की याद छाया की तरह उनके पीछे लगी रही। उन्हें डर लगता कि कहीं वे पागल न हो जाएं। यह अनुभव उनके मन-मस्तिष्क में बैठ गया था। वे जितना ही इस विध्वंसकारी अनुभव से भागने की कोशिश करते, वह उतना ही अधिक उनका पीछा करता। पलायन इसका उपाय नहीं था। उन्हें इसका सामना करना ही होगा।

जॉय मोहन राय अब पंद्रह वर्ष के हो गए थे और उन्होंने आखिरकार यथार्थ का सामना करने का निश्चय किया। सबसे पहले तो उन्होंने इस भूचाल के सभी ब्योरों को यादकर उन्हें फिर से जीने का प्रयत्न किया। उन्हें हरेक प्रसंग की याद इतनी साफ थी कि एक बार को वह हैरान रह गए। इन घटनाओं में सबसे साफ चीज थी लोगों

की चीख-पुकार : "हे भगवान, हमें बचाओ !" मुक्तिदाता ईश्वर की पुकार के बारे में सोचते हुए उन्होंने अनुभव किया कि वे खुद भी अनजाने ही अपनी रक्षा तथा दिशानिर्देश के लिए ईश्वर की तरफ देख रहे हैं। अतएव इसके बाद ईश्वर की खोज प्रारंभ हुई और धीरे-धीरे उनका मन शांत हो गया।

ईश्वर कौन है ? वह कैसा दिखाई देता है ? मनुष्य के साथ उसका रिश्ता क्या है ? उनके चेतन व अवचेतन मन में ये प्रश्न घुमड़ने लगे और तब उन्होंने अनुभव किया कि ईश्वर साक्षात प्रेम है और मानवता के प्रति प्रेम के कारण ही उसने मनुष्य की सृष्टि की है। हालांकि कच्ची उम्र के कारण उनमें अभी बालपन था लेकिन जीवन व मृत्यु के अभूतपूर्व अनुभव होने के बाद वे शीघ्र ही परिपक्व हो गए थे। जॉय मोहन राय ने विधानसभा में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए अपने इन अनुभवों को सदस्यों के साथ बांटा था। तब तक तो वह असम एवं पहाड़ी लोगों के नेता माने जा चुके थे और संविधान सभा में पहाड़ी क्षेत्रों के एकमात्र सदस्य बन चुके थे।

शैला गांव के जिस स्कूल में जॉय पढ़े थे, उसकी इमारत भूचाल में पूरी तरह नष्ट हो गई थी, अतः जॉय मोहन राय पढ़ाई के लिए असम की राजधानी शिलांग चले गए। धर्म संबंधी अनुभवों की खोज उनमें अब और गहरी हो चुकी थी और उनकी ज्ञान-पिपासा भी बढ़ चुकी थी। शिलांग में उनका आध्यात्मिक भूचाल से सामना हुआ और पंद्रह साल की युवावस्था में ही यीशू मसीह को उन्होंने अपना मुक्तिदाता मान लिया क्योंकि उनको लगा कि ईसाई संदेश के माध्यम से ही समाज में प्रेम फैल सकेगा। उनके परिवार को इस बात से बहुत धक्का लगा क्योंकि वह अब भी अपने देश की धार्मिक आस्था पर टिका था। बाद में, उनके भाई ने भी ईसाई धर्म अंगीकार कर लिया था।

एंट्रेंस परीक्षा (जो आजकल दसवीं कक्षा अथवा हाई स्कूल लीविंग एग्जामिनेशन कहलाती है) पूरी कर लेने के बाद जॉय मोहन राय अपनी पढ़ाई कलकत्ता (अब कोलकाता) के डच कालेज (आजकल स्काटिश चर्च कालेज) में जारी रखी। कलकत्ता में अध्ययन करते समय वे विभिन्न ईसाई संगठनों जैसे कि स्काटिश चर्च, सालवेशन आर्मी आदि के संपर्क में आए। इस नवयुवक के लिए यह नया ताजगी भरा अनुभव था। शिलांग में एकमात्र ईसाई संगठन वेल्श मिशन था। विभिन्न धार्मिक ग्रुपों के कारण उन्हें ईसाई धर्म की शक्तियों तथा प्रति-शक्तियों को समझने का अवसर मिला। इससे उनके धर्म संबंधी विचारों व संकल्पना का विस्तार हुआ और उन्होंने हिंदू, इस्लाम व विश्व के अन्य धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन शुरू किया। वे जितना अधिक धार्मिक विचारों का अध्ययन करते रहे, उतनी ही अधिक उनकी धार्मिक शिक्षाओं की समझ बढ़ती गई। पर वह बाईबल में वर्णित प्रेम की शक्ति के उतने ही अधिक कायल

भी होते गए क्योंकि सबसे महान शक्ति प्रेम ही है।

स्नातक स्तर तक की शिक्षा पूरी कर लेने के बाद जॉय मोहन राय ने दर्शनशास्त्र में एम.ए. किया। इन्हीं दिनों अमेरिका के एक ईसाई संगठन ने चर्च आफ गॉड को भारत जाने का अनुरोध किया। इसने यहां आकर भारतवासियों से विचार-विमर्श किया और एक-दूसरे को ज्यादा अच्छी तरह समझने के आशय से एक भारतीय ईसाई संगठन को अमेरिका आने का निमंत्रण भी दिया। जिस भारतीय ईसाई संगठन ने यह निमंत्रण स्वीकार किया, उसमें एक अत्यंत प्रभावशाली ईसाई धर्म-प्रचारक ए.डी. खान भी शामिल थे। खान मूलतया उड़ीसा के इस्लाम धर्मावलंबी थे और बाद में उन्होंने ईसाई धर्म अंगीकार कर लिया था। खान ने अमेरिका के विभिन्न भागों में जोरदार प्रचार किया और केलिफोर्निया के वेस्ट कोस्ट की एक धर्म-सभा में भारत में स्त्रियों की दशा एवं उनके उद्धार की चर्चा की। तब तक भारत में स्त्रियों का सामाजिक जीवन बहुत ही सीमित था। इसके बाद वे क्रॉस आफ क्राइस्ट, मुक्ति के संदेश पर बोले। इस धर्म-सभा में शामिल एक चौबीस वर्षीया अमेरिकी युवती खान के भाषण से बहुत प्रभावित हुई और उसने भारत में एक मिशनरी की तरह काम करने का निर्णय लिया। यह युवती मिस नोरा एवलिन निकोल्स थी। जब अमेरिकी मिशनरियों का एक दल, जिसमें मिस निकोल्स भी शामिल थीं, हावड़ा स्टेशन पहुंचा तो उन्हें लिवाने के लिए भारत का एक दल आया हुआ था। इस भारतीय दल में जॉय मोहन राय भी थे।

तीन से अधिक वर्षों तक इन दोनों दलों ने मिलकर यीशू तथा प्रेम के संदेश का प्रचार किया। जॉय मोहन राय तथा मिस निकोल्स अपने प्रभु के नाम का प्रचार करने में अग्रणी साबित हुए। उन्हें एक-दूसरे के प्रति विशेष आकर्षण का भी अनुभव हुआ और उन्होंने शादी करने का निर्णय किया। यह शादी कलकत्ता में 1907 में हुई और इस दल के मिनिस्टर ब्रदर मंडल ने पादरी का काम निभाते हुए शादी संपन्न कराई। अब एक नई तरह का जीवन शुरू हुआ और सेवा के काम का स्वरूप निर्धारित हो गया। जॉय मोहन राय, जो अब तक एक धर्म-प्रचारक बन चुके थे, रेवरेंड जेम्स जॉय मोहन निकोल्स राय के नाम से जाने जाने लगे। पत्नी के उपनाम 'निकोल्स' तथा 'जेम्स' नाम जोड़कर इस महान आदमी के नाम का नया संस्कार हो गया था। अपने लोगों में वे 'बाह जॉय' के नाम से प्रसिद्ध हुए और आज भी लोग उन्हें इसी नाम से याद करते हैं। वस्तुतः वे ईश्वर के महान प्रेम की संतान थे।

बाद के वर्षों में इसी प्रेम के वशीभूत होकर वे न केवल अपने लोगों बल्कि उत्तर-पूर्वी क्षेत्र और भारतीय उपमहाद्वीप के सभी लोगों की सेवा के काम में जुट गए थे।

3

अमेरिका-प्रवास व वापसी

यात्रा हमारे ज्ञान में नया अनुभव जोड़ती है और स्मृति-पटल पर आकृतियों को गहरे तक खोद देती है । **–सकरमैन**

जो व्यक्ति अपने देश की सीमाओं से बाहर नहीं जाता, वह पूर्वाग्रहों से ग्रस्त रहता है । **–गोल्डोनी**

अपने विवाह से एक वर्ष पहले यानी वर्ष 1906 में रेवरेंड निकोल्स राय अपना जीवन ईसाई धर्म को समर्पित करने का निश्चय कर चुके थे । लेकिन धर्म-प्रचार के लिए ही उन्होंने अपना जीवन क्यों समर्पित किया ? संभवतया युवावस्था में हुए मार्मिक अनुभव तथा समय-समय पर होने वाली चमत्कारी ईश्वर-दर्शन की घटनाएं इसकी कारक रही होंगी । इससे भी बड़ा प्रेरक कारक यह हो सकता है कि आध्यात्मिक जागृति के फलस्वरूप उनकी अंतरात्मा ऐसी ही जीवन-शैली को अपनाना चाह रही थी और कलकत्ता में वाई.एम.सी.ए. की एक सभा में अमेरिका से आए एक धर्म-प्रचारक के भाषण ने तो उन पर ऐसा प्रभाव डाला कि उनके जीवन की दिशा निश्चित हो गई । उन्होंने सभी पहाड़ी क्षेत्रों तथा घाटियों में घूम-घूमकर प्रभु यीशू के संदेश का प्रचार किया । रेवरेंड निकोल्स राय कलकत्ता के चर्च के साथ अत्यंत उत्साह से जुड़ गए जहां एक फैलोशिप भी स्थापित थी । प्रसंगवश यह बताना उचित होगा कि उन दिनों असम के पहाड़ी क्षेत्रों में बहुत कम विद्यार्थियों को कलकत्ता में अध्ययन करने का अवसर मिल पाता था और फैलोशिप में रह पाना तो और भी कठिन होता था । रेवरेंड निकोल्स राय उन चंद लोगों में थे जिन्हें ये दोनों चीजें नसीब हुई थीं । उन्होंने अपने जन्मग्राम शैला, चेरापूंजी तथा अन्य स्थानों पर फैलोशिप सेंटर स्थापित किए थे ।

पूर्वी भारत में ईसाई धर्म का प्रचार करने के दौरान ही उन्हें संभावित प्रथम विश्वयुद्ध की खबरें मिलीं । तब उनका अमेरिका के चर्च आफ गॉड से नियमित पत्र-व्यवहार होता रहता था और वे चर्च के ऐसे अनेक व्यक्तियों को जानते थे जिन्होंने

'सुसमाचार' के प्रचार में अनथक काम किया था। तभी उन्हें अमेरिका आने का निमंत्रण मिला और 1913 में वे अमेरिका चले गए। वे कनाडा, ब्रिटिश आइले, चीन और जापान भी गए थे। जब 1914 में प्रथम विश्वयुद्ध छिड़ गया तो रेवरेंड निकोल्स राय अमेरिका में ही थे और चर्च के काम से वहां के विभिन्न भागों की यात्रा करने, अमेरिकी लोगों के साथ अपने अनुभव बांटने तथा उनसे कुछ सीखने के कामों में व्यस्त थे। उनकी पहली लड़की का जन्म वहीं हुआ था। उनके लिए अमेरिका-प्रवास सामाजिक तथा आध्यात्मिक अनुभवों की खान साबित हुआ। अमेरिकी परिवार में रहकर होने वाले अनुभवों के अलावा वैयक्तिक तथा सामुदायिक सेवा के स्तर पर अमेरिकी लोगों की स्वाधीनता की भावना से भी वे बहुत प्रभावित हुए। इसके विपरीत भारतीय स्थितियों को स्वीकार करने में उन्हें बहुत कठिनाई महसूस होती क्योंकि भारत, ब्रिटेन का, न केवल एक उपनिवेश था बल्कि यहां लोगों को गोरे साहबों की चाटुकारिता करके तथा वफादारी निभाकर ही जीवन में आगे बढ़ने का अवसर मिल पाता था। भारत में स्वतंत्रता आंदोलन की लहरें उठनी शुरू हो चुकी थीं और रेवरेंड निकोल्स राय भी एक भारतीय राष्ट्रवादी होने के नाते स्वाधीनता संघर्ष में जुट जाने से अपने को रोक नहीं पाए थे। यद्यपि उनका जीवन चर्च की सेवा को समर्पित था, अतः उन्होंने चर्च के दायित्व को निभाने में अपनी राष्ट्रवादी भावनाओं को अपने काम में बाधा नहीं बनने दिया।

अमेरिका में धर्म-प्रचारक के रूप में उनका काम अत्यंत सफल रहा। उनकी वहां बहुत मांग थी और उनका जीवन भरा-पूरा था। लेकिन भारत भी उन्हें चुंबक की तरह खींचता रहता था क्योंकि अपने लोगों के प्रति उनका लगाव बहुत गहरा था। अतएव इस परिवार ने 1916 में अमेरिका से वापिस लौटने का निर्णय कर लिया। भारत लौटते समय वे पहले ब्रिटेन गए। जहाज में चढ़ने से एक रात पहले रेवरेंड निकोल्स राय को सपना आया बल्कि उन्हें एक इलहाम हुआ। उन्होंने अपनी पत्नी के सिवा किसी और को इस इलहाम के बारे में नहीं बताया। उन दोनों ने साथ मिलकर प्रार्थना की और भारत-यात्रा रद्द करने का निर्णय लिया और अगली ही सुबह इस पर अमल भी किया। कुछ दिनों बाद वे किसी दूसरे जहाज से भारत के लिए रवाना हुए। अंततः जब वे भारत पहुंचे तो उनके सभी रिश्तेदार, मित्र तथा ईसाई साथी उन्हें सुरक्षित तथा जीवित देखकर हैरान रह गए। उन्हें इनके जीवित रहने की आशा नहीं थी क्योंकि जिस जहाज से यात्रा न करने का निकोल्स राय परिवार ने अंतिम क्षणों में निर्णय लिया था, उस पर जर्मन पनडुब्बियों ने तोपों से हमला बोल दिया था और वह जहाज डूब गया था। ईश्वर की रहस्यमयी शक्ति ने रेवरेंड निकोल्स राय तथा उनके

प्रियजनों के जीवन पर अपना रंग जमाना शुरू कर दिया था।

अमेरिका से लौटने के बाद रेवरेंड निकोल्स राय चर्च की अनेक सभाओं, धार्मिक सम्मेलनों तथा सुसमाचार के प्रचार कार्यों के सिलसिले में असम विशेषकर खासी व जयंतिया पहाड़ियों के लोगों के बीच गए। वे जितना अधिक लोगों के सीधे संपर्क में आए, उतना ही अधिक उन्होंने इन लोगों की विविध समस्याओं तथा जरूरतों को समझा। यद्यपि वे लोगों के आध्यात्मिक सरोकारों के प्रति ज्यादा चिंतित थे और उन्होंने सफलतापूर्वक इस दिशा में काम भी किया लेकिन उन्होंने अनुभव किया कि शारीरिक भूख तथा मानसिक अनुशासन भी कम महत्वपूर्ण नहीं। इस यथार्थ को भी उन्होंने सहज ही स्वीकार किया कि व्यक्ति तथा समाज का विकास लोगों की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता पर निर्भर करता है। अतएव मनुष्य के संपूर्ण विकास की बात उनके विचारों पर हावी हो गई। परिणामस्वरूप उन्होंने एक ऐसा धार्मिक पुरोहित बनने का निश्चय किया जिसकी चिंता न केवल मानव-आत्मा को बचाने की होगी बल्कि मनुष्य के समग्र विकास तथा उसके व्यक्तित्व का विकास करने के लिए भी प्रतिबद्ध होगी।

यह अनुभव हो जाने के बाद कि प्रभु की सेवा ही मानवता की सेवा है, रेवरेंड निकोल्स राय सेवा के नए क्षेत्रों अर्थात शैक्षिक व आर्थिक सेवा के क्षेत्रों की छानबीन में जुट गए।

उन्होंने शिक्षा केंद्र खोलने के काम को प्रोत्साहन देना शुरू किया और इससे भी एक कदम आगे बढ़कर आर्थिक उद्यमों के बारे में सोचा। खासी और जयंतिया पहाड़ियों का दक्षिणी हिस्सा कृषि के क्षेत्र में अत्यंत संपन्न था–खासकर संतरे के बागानों के मामले में। रेवरेंड निकोल्स राय ने संतरा उत्पादकों तथा व्यापारियों के लिए संयुक्त पूंजी कंपनी की शुरुआत की। उन्हें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि व्यापारिक कौशल के गुण भी उनके व्यक्तित्व में निहित हैं। उनके द्वारा स्थापित यूनाइटिड कंपनी का उद्देश्य कृषि उत्पाद से लोगों को अधिकतम लाभ पहुंचाना था। उनके दृष्टिकोण में तब आमूल परिवर्तन आ गया, जब उन्होंने देखा कि ब्रिटिश शासन लोगों को न केवल राजनीतिक दृष्टि से बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी गुलाम बनाने में जुटा था। उनके अपने जीवन का विकास – पहले आध्यात्मिक दृष्टि से ईश्वरीय दर्शन, फिर ईसाई धर्म की सेवा करने के लिए धर्म-प्रचारक बनना – विभिन्न क्षेत्रों में होता दिखाई देता है अर्थात समाज सेवा, लोगों के आर्थिक उत्थान और शिक्षा के प्रसार में। उन्होंने इस तरफ भी विशेष ध्यान दिया कि लोगों में व्यापार तथा आर्थिक कौशल का विकास हो जिसे स्वयं उन्होंने विदेश यात्राओं, विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका की यात्रा के दौरान सीखा था।

प्रथम विश्वयुद्ध अभी-अभी समाप्त हुआ था और जर्मनी को ब्रिटेन व फ्रांस की संयुक्त शक्ति ने दबा रखा था। ब्रिटेन का "लहरों पर आधिपत्य" का जोश अपने चरम पर था। इधर भारत में भी स्वाधीनता तथा जनतंत्र का विचार हिलोरें ले रहा था। राष्ट्रीय आंदोलन जोर पकड़ रहा था और दक्षिण अफ्रीका से गांधीजी का संदेश "ब्रितानी ताज के जवाहरात" भारत में पहुंचता दिखाई दे रहा था। रेवरेंड निकोल्स राय इन सभी घटनाओं और तत्कालीन बुद्धिजीवियों की भावनाओं से अच्छी तरह परिचित थे। वे तो पहले ही एक सच्चे, सुविज्ञ नेता और देश व क्षेत्र के जीवन एवं राजनीति के प्रति उदार दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के रूप में अपना विशिष्ट स्थान बना चुके थे।

अतएव यह स्वाभाविक ही था कि खासी पहाड़ियों के लोगों ने उनसे प्रार्थना की कि संविधान सभा में वे ही उनका प्रतिनिधित्व करें। वे कुछ हिचकिचाए और शायद यह ठीक भी था।

ईसा मसीह के संदेश के धर्म-प्रचारक होने के नाते वह राजनीति के क्षेत्र में, जो सेवा का एक बिल्कुल भिन्न क्षेत्र था, कैसे प्रवेश कर सकते थे ? उन्होंने चर्च के सहयोगियों के साथ इस बारे में अनेक बार विचार-विमर्श किया और साथ ही प्रार्थना तथा व्रत का सहारा लेकर इस पर चिंतन किया। वे इसका उत्तर पाना चाहते थे कि चर्च के पुरोहित होते हुए भी वे राजनीति के द्वारा लोगों की सेवा करें, क्या प्रभु की इच्छा यही है ? अंततः उन्होंने अनुभव किया कि धर्म व जनसेवा दोनों के माध्यम से उन्हें जनता-जनार्दन की सेवा करनी चाहिए। निर्णय ले लिया गया था। वे राजनीति में आ गए और उन्होंने फिर कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा।

4

धार्मिक योद्धा

हमारे प्रत्येक आचरण पर सच्चे धर्म का प्रभाव पड़ता है; यह एक जीवित वृक्ष के समान होता है जिसका रस दूर तक फैली शाखाओं में पहुंचता रहता है। **—पेन**

संयुक्त राज्य अमेरिका से लौटने के बाद रेवरेंड निकोल्स राय के जीवन में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन यह आया कि उनमें अपने धर्म, ईसाई धर्म तथा अन्य धर्मों के प्रति भी ज्ञान की पिपासा बढ़ गई। उन्होंने उपलब्ध सभी धर्म-ग्रंथों का अध्ययन कर इन धर्मों के सिद्धांतों, दर्शन तथा सीख को ईसाई धर्म की तुलना में समझने की कोशिश की। इस अध्ययन के फलस्वरूप उन्होंने खासी भाषा में एक पुस्तिका 'हिस्ट्री आफ क्रिश्चियन चर्च' की रचना कर डाली। यह पुस्तिका कुल 21 पृष्ठों की है और चार अध्यायों में विभाजित है। संक्षेप में, इस पुस्तिका को लिखने का उद्देश्य पाठकों को ईसा मसीह के पट्टशिष्यों (एपॉसल्ज़) के जीवन व शिक्षाओं और प्रोटेस्टेंट धर्म की शुरुआत से पहले के चर्च की सरंचना से परिचित कराना था। अंतिम अध्याय में उन्होंने ईसा मसीह के व्यक्तित्व को आधार बनाया था कि कैसे वे मानवता के मुक्तिदाता बने।

इस पुस्तिका की रचना के समय हालांकि उन्होंने अपनी उम्र के अभी तीस वर्ष ही पार किए थे लेकिन चर्च के इतिहास तथा ईसाई धर्म के प्रचार से संबद्ध व्यक्तियों के प्रति उनकी समझ में परिपक्वता दिखाई देती थी। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि इस पुस्तिका के माध्यम से उनकी अडिग आस्था की अभिव्यक्ति भी होती थी कि धर्मपरायणता ईसा मसीह की शिक्षाओं का अभिन्न अंग है। रेवरेंड निकोल्स राय का मत था कि पट्टशिष्यों द्वारा धर्मपरायण जीवन तथा आध्यात्मिक खोज करते रहने का आग्रह ईसा मसीह के संदेश के मूल सिद्धांतों का आधार था। ईसा मसीह ही एकमात्र मुक्तिदाता हैं, यही इस पुस्तिका की विषयवस्तु थी। उन्होंने लगभग 248 ईस्वी के साइप्रस के विद्वानों की रचनाओं से भरपूर उद्धरण दिए थे। रेवरेंड निकोल्स राय ने रोमन कैथोलिक धर्म के चर्च के रूप में प्रादुर्भाव तथा महत्व का वर्णन बहुत ही स्पष्ट शब्दों में किया था।

पुस्तिका के पाठकों को चर्च की उदारता, तीसरी शताब्दी के दौरान चर्च का नियंत्रण करने वाले तीन प्रमुख केंद्रों एलिग्जेंड्रिया (मिस्र), एन्टिओच (सीरिया) और रोम तथा ईसाई धर्म के प्रचार में इनकी भूमिका के बारे में जानकारी दी गई थी। रेवरेंड निकोल्स राय ने बड़ी खूबसूरती से स्पष्ट किया था कि कैसे रोम का पोप प्रमुख पादरी और फ्रांस, स्वीडन, बेल्जियम, हालैंड, जर्मनी, स्विट्जरलैंड, ब्रिटेन, आयरलैंड, नार्वे आदि देशों का मान्य नेता मान लिया गया था। उन्होंने आरंभिक शताब्दियों में ईसाई धर्म के ह्रास के वर्णन में भी कोई संकोच नहीं किया था। लेकिन इस अंधकार में भी, रेवरेंड निकोल्स राय ने लिखा था, "उज्जवल नक्षत्रों" का भी उदय हुआ था। उन्होंने अपने तर्क की पुष्टि में चौदहवीं शताब्दी के जोहान वाइकलिफ और पंद्रहवीं शती के जान हॅस ऑफ बोहेमी को उद्धृत किया था।

रेवरेंड निकोल्स राय के अनुसार ईसाई धर्म के इतिहास में सोलहवीं शताब्दी परिवर्तन की द्योतक है क्योंकि तब अनेक धार्मिक नेताओं को प्रसिद्धि मिली थी। उन्होंने जर्मनी के मार्टिन लूथर, मेलनक्थान, स्विट्जरलैंड के स्विगंल और इनके अलावा फैरल, जोहान कैल्विन तथा जॉन नॉक्स का भी उल्लेख किया है। कर्मकांड को, ईसा मसीह में सहज आस्था से, अलग कर देने के बाद ऐसी उथल-पुथल हुई कि प्रोटेस्टैंट धर्म को एक व्यापक शक्ति के रूप में मान्यता मिल गई। इसके बावजूद रेवरेंड निकोल्स राय ने इसी अवधि में प्रोटेस्टैंटों द्वारा की गई भूलों की ओर भी निस्संकोच इशारा किया है। वह प्रोटेस्टैंट लेखक डेविड सिंपसन से सहमत दिखाई देते हैं। पुस्तिका का समापन रेवरेंड निकोल्स राय की इस अपील से हुआ है कि हमें खुले मन से ईसा मसीह के माध्यम से प्रभु तक पहुंचने की कोशिश करनी चाहिए और अंतर्बाधाओं के कारण प्रभु में आस्था तथा अपने विश्वासों को विकृत नहीं होने देना चाहिए। आस्था का स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि धर्मावलंबियों के हृदय में आत्मिक उजास का अनुभव हो ताकि ईसा मसीह की अनुकंपा का वे सहज अनुभव कर सकें।

इस छोटी-सी पुस्तिका के द्वारा हमें रेवरेंड निकोल्स राय के गहन ज्ञान, आस्था तथा विश्वास को प्रकट करने की क्षमता और कलम के धनी होने का पता चलता है। उन्होंने अपनी दूसरी पुस्तक खासी भाषा में 'ऊ बद ला का बलंग' सन् 1925 में लिखी थी। तब तक वे सरकार में मंत्री पद पर आसीन हो चुके थे। इस पुस्तक में ईसा मसीह की शिक्षाओं की व्याख्याओं से उनकी परिपक्वता तथा विशद् ज्ञान का परिचय प्राप्त होता है। वस्तुतया रेवरेंड निकोल्स राय ने अनेक पुस्तकों की रचना की और धार्मिक साहित्य तथा विश्वासों पर खूब जमकर लिखा।

उनके ग्रीक तथा रोमन साहित्य के विशद् अध्ययन से कोई भी प्रभावित हुए बिना

नहीं रह सकता और अपने व्याख्यानों तथा लेखन में वे इनके उद्धरण अक्सर दिया करते थे। 'भगवत गीता' उनकी प्रिय पुस्तक थी। अपने अध्ययन-व्यसन के कारण ही वह पैगंबर जरदुश्त (628-551 ई.पू.) तक जा पहुंचे, जिसके नाम पर पारसी धर्म की स्थापना की गई थी। उसने सृजन, प्रकाश तथा अच्छाई के ईश्वर ओरनज्द़ की पूजा करना सिखाया, जो बुराई के प्रतीक अहरिमन तथा अंधेरे से सदा संघर्ष करता रहता है। वे गौतम बुद्ध के भी उतने ही प्रशंसक थे। बुद्ध का एक सिद्धांत है कि दुख को अस्तित्व से अलग नहीं किया जा सकता। अहम और भौतिक इच्छाओं के शमन से आत्मिक बोध की प्राप्ति होती है, जो दुख तथा अस्तित्व से मुक्ति दिलाती है। अपनी रचनाओं में रेवरेंड निकोल्स राय ने अक्सर कनफ्यूशी धर्म का भी उल्लेख किया है जिसकी स्थापना चीन में कनफ्यूशीयस (551-479 ई.पू.) ने की थी और अपनी शिक्षाओं में उन्होंने वैयक्तिक सद्‌गुणों, उपासना और न्याय पर बल दिया था। उन्होंने कुरान का भी अध्ययन किया था और मोहम्मद की लड़ाइयों और लोगों को उनके द्वारा दी गई नेक शिक्षाओं का भी अपने कथनों में भरपूर उल्लेख किया है।

रेवरेंड निकोल्स राय के अनुसार ईसा मसीह इनमें श्रेष्ठतम थे। अपनी रचनाओं में उन्होंने 'ब्रह्म समाज' के नेताओं के विचारों का अक्सर उल्लेख किया है। केशवचंद्र सेन ने कहा है कि "ईसा मसीह परमात्मा के विधान से मानवता के सुधार तथा नवजीवन प्रदान करने के लिए भेजे गए थे।" पी.सी. मजूमदार ने कहा है कि "ब्रह्म समाज ईसा मसीह को सभी पैगंबरों तथा धर्म-गुरुओं का मुखिया मानता है।" और तो और, महान हिंदू समाज तथा धार्मिक सुधारक राजा राममोहन राय ने भी कहा है : "धार्मिक आस्था को लेकर मेरी दीर्घ व अबाध खोज का परिणाम यही निकलता है कि किसी भी अन्य ज्ञान की तुलना में ईसा मसीह का मत नैतिक सिद्धांतों तथा विवेकी जनों द्वारा इसे अपनाने के मामले में सबसे अधिक उपयुक्त है।"

अपने तर्क की पुष्टि में रेवरेंड निकोल्स राय ने दो प्रसिद्ध नास्तिकों के दृष्टिकोण का उल्लेख किया है। जॉन स्टुअर्ट मिल ने कहा है : "मानवता के आदर्श प्रतिनिधि तथा मार्गदर्शक के रूप में धर्मों ने इस व्यक्ति (ईसा मसीह) पर निर्भर रहने का निर्णय कर कोई गलत चुनाव नहीं किया है।" थामस पेन ने ईसा मसीह की जोरदार वकालत करते हुए कहा : "वे सद्‌गुणी तथा प्रशंसनीय व्यक्ति थे। उन्होंने जिस तरह की नैतिकता का प्रचार किया तथा स्वयं भी उसका पालन किया, वह अत्यंत हितकारी थी ... इस मानक को कोई दूसरा नहीं छू सका है" (द ऐज ऑफ रीज़न)। एक देववादी धार्मिक विश्वास को मानने वाले थियोडोर पार्क ईसा मसीह को "मानव की संतानों में महान आत्मा" मानते थे।

रेवरेंड निकोल्स राय ने अपनी धार्मिक आस्था के विचार के लिए कलम का प्रयोग एक शस्त्र की तरह किया था। उनका खासी भाषा में लेखन तथा पुस्तकें एक के बाद एक आईं। यह लगातार हो रही बारिश के समान थीं लेकिन ताजगी तथा ज्ञान का प्रकाश करने वाली। इनमें कुछ अन्य पुस्तिकाएं हैं : 'फा जिङ्खा थिमनाका मिनसिएम' (1925), 'ऊ खाइस्ट बद ला का बलंग' (1925) और 'की लाड का जिङ्पाइनिम' (1932)।

रेवरेंड निकोल्स राय ने अपनी ही तरह का धर्म-प्रचार किया तथा नए तर्क प्रस्तुत किए। भले ही कोई उनके विचारों से सहमत न हो लेकिन फिर भी उनके उपदेशों तथा लेखन में निहित उनके ज्ञान तथा जोश को नकार नहीं पाता था। यही कारण है कि अपने लोगों में उनसे अधिक प्रभावोत्पादक धर्म-प्रचारक नहीं हुआ। वे निस्संदेह एक धार्मिक योद्धा थे। पर दिलचस्प बात यह है कि उन्हें असम तथा पूरे देश में एक महत्वपूर्ण जननेता होने का गौरव भी प्राप्त हुआ। अपने लोगों के बीच, जो उन्हें 'बाह जॉय' के रूप में ही पहचानते थे, वह महानता के अवतार थे।

5

राजनीतिक व्यक्तित्व

राजनीति एक व्यवसाय है – गंभीर, पेचीदा और सही अर्थों में एक नेक व्यवसाय।

– ड्वाइट डी.आयज़नहॉवर

सन् 1921 रेवरेंड निकोल्स राय के जीवन में एक महान परिवर्तन का वर्ष था, जब वह असम की विधान परिषद के लिए चुने गए थे। इसी के साथ उनके जनसेवा कार्य का एक नया दौर भी शुरू होता है। बुद्धिजीवी होने तथा लोगों की सेवा में पूर्णतया समर्पित व्यक्ति होने के नाते उन्होंने परिषद की कार्रवाई को स्थायी रूप से प्रभावित करने वाला एक नया पक्ष जोड़ा। उनका योगदान बहुत ही विशिष्ट था, उनकी विद्वता तथा जनसेवा की समझ का परिषद पर प्रभाव पड़ा और धीरे-धीरे उन्हें सही बात के लिए लड़ने वाले योद्धा के रूप में स्वीकार किया जाने लगा।

एक जन-प्रतिनिधि होने के नाते वह खासी लोगों की परंपरा तथा दाय के गौरव के प्रति सदैव सजग रहते थे। उन्होंने अनुभव किया कि विद्यमान स्वतंत्र 'लघु-राज्यों' के राजनीतिक ढांचे के माध्यम से ही राजनीतिक दाय प्रतिबिंबित होता है और इस बात की उपेक्षा नहीं की जा सकती। खासी पहाड़ियों में अनेक खासी राज्य थे। ये सभी अकेले या सामूहिक रूप से अपनी स्थिति अथवा दर्जे के बारे में जानने को उत्सुक थे और साथ ही अपनी पहचान भी नहीं खोना चाहते थे। इसी बात को ध्यान में रखते हुए रेवरेंड निकोल्स राय ने तत्कालीन नेताओं के साथ मिलकर 4 से 6 सितंबर 1923 तक शिलांग में अपने क्वालापट्टी के निवास पर सिएम, लिंग्दोह, सिरदार तथा इलाका प्रमुखों की एक बैठक बुलाई। इस बैठक में खासी लोगों की परंपरा और रीति-रिवाज, न्याय देने की उनकी विशिष्ट प्रणाली, काश्तकारी की पद्धति और बदलती हुई संवैधानिक स्थिति में राजनीतिक परिस्थिति को भी सुरक्षित रखने पर विचार-विमर्श किया गया। रेवरेंड निकोल्स राय ने इस बैठक में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। बैठक के फलस्वरूप खासी नेशनल दरबार का गठन हुआ और सोहरा के सिएम – ऊ जाइन

मणिक – इसके पहले अध्यक्ष बने ।

रेवरेंड निकोल्स राय ने खासी नेशनल दरबार को मजबूत करने में अपना काफी समय दिया । 12 अगस्त 1924 को आयोजित दरबार के दूसरे अधिवेशन में उनके भाषण में खासी लोगों की स्थिति को बहुत स्पष्ट शब्दों में प्रस्तुत किया गया था । उन्होंने लोगों से आग्रह किया कि वे परिवर्तन के प्रति सजग रहें और साथ ही भारत के अन्य हिस्सों में होने वाले महत्वपूर्ण बदलाव की जानकारी भी रखें । हां, उन्हें खासी राज्यतंत्र के पारंपरिक मूल्यों को भी सुरक्षित रखना होगा । अपने भाषण के द्वारा रेवरेंड निकोल्स राय ने स्पष्ट संकेत दिया कि ब्रिटिश सरकार को यह तथ्य याद रखना चाहिए कि खासी राज्य छोटा भले ही हो, पर यह अपने मामलों को संचालित करने में पूर्णतया सक्षम है । रेवरेंड निकोल्स राय के भाषण का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी था कि उन्होंने खासी प्रथाओं, व्यवहार तथा पारंपरिक कानून को वर्गीकृत करने की आवश्यकता पर जोर दिया था ।

तत्कालीन गवर्नर सर जान कर्र की टिप्पणी से स्पष्ट हो जाता है कि सामान्य तौर पर खासी नेशनल दरबार का और विशेष तौर पर रेवरेंड निकोल्स राय का ब्रिटिश शासकों के दिलो-दिमाग पर कितना अधिक असर था । गवर्नर की टिप्पणी इस प्रकार थी : ''हाल ही में मैंने कुछ महीने पहले शिलांग में आयोजित खासी नेशनल दरबार की कार्रवाई को दिलचस्पी से पढ़ा है । जहां तक मैं समझ पाया हूं, इसके संस्थापक तथा समर्थक खासी जातियों की राष्ट्रीय प्रतिभा को स्वतंत्र रहते हुए विकसित करना चाहते हैं ।''

इस टिप्पणी से यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि खासी नेशनल दरबार एक संस्था मात्र नहीं बल्कि खासी जाति की ''राष्ट्रीय प्रतिभा'' संबंधी एक आंदोलन भी था । औपनिवेशिक सत्ता के युग में इसे एक महान उपलब्धि ही कहा जा सकता है ।

राष्ट्रीय स्तर पर, 1921 के आम चुनाव में, रेवरेंड निकोल्स राय भारी बहुमत से चुने गए थे । उन दिनों सभी व्यस्क लोगों को मताधिकार प्राप्त नहीं था जैसे कि इन दिनों है । इसलिए तद्योग्य मतपत्रों की संख्या सीमित थी । रेवरेंड निकोल्स राय को कुल 358 मत मिले थे जबकि उनके विरोधी श्रीयुत शिवनाथ दत्ता को केवल 112 मत ही प्राप्त हुए थे । 12 फरवरी 1921 को हुई विधान परिषद की पहली ही बैठक में रेवरेंड निकोल्स राय ने सदन में हुई बहस के समय अपने भाषण से एक स्थायी प्रभाव छोड़ा था ।

एक समाज सुधारक के नाते भी उन्होंने विभिन्न गतिविधियों द्वारा गहरा प्रभाव डाला था–विशेष रूप से खासी पहाड़ियों के विभिन्न राज्यों के लोगों को एक करने में

अपनी विशिष्ट भूमिका निभाकर उन्होंने "खासी अस्मिता" को एक नया लोकाचार प्रदान किया था, जो अनेक प्रयासों के बावजूद अभी तक बेडौल बनी हुई थी। रेवरेंड निकोल्स राय के प्रयत्नों से खासी पहचान संबंधी दृष्टिकोण में एक भारी परिवर्तन आ गया था।

आगामी आम चुनाव में भी रेवरेंड निकोल्स राय ने अपने दो विरोधियों कङ्गोर ए. मेक्डोनाल्ड बसाइयामोइत तथा शिवनाथ दत्ता को बुरी तरह पराजित किया था। जब सदन बनाने का अवसर आया तो गवर्नर सर जान कर्र एक अजीब उलझन में पड़ गए। असल में वे हिंदुओं और मुसलमानों के बीच संतुलन बनाए रखना चाहते थे। ब्रह्मपुत्र घाटी से मोहम्मद सादुल्लाह मुस्लिम प्रतिनिधि के रूप में चुने गए थे लेकिन सूरमा घाटी से, जिसमें सिल्चर और कछार जिले भी शामिल थे, विशिष्ट राजनीतिक परिस्थिति के कारण वहां से कोई प्रतिनिधि नहीं चुना गया था। इससे बचने के लिए जनजातीय प्रतिनिधि को मंत्री बनाने का विचार उनके मन में आया। रेवरेंड निकोल्स राय पर ब्रिटिश शासकों की निगाहें पहले से टिकी हुई थीं जिसमें गवर्नर सर जान कर्र विशेष रूप से शामिल थे, अतः उन्होंने निकोल्स राय को मंत्रिमंडल में शामिल किए जाने की संभावना का संकेत दिया। आश्चर्यजनक बात यह है कि रेवरेंड निकोल्स राय ने कोई उत्साह नहीं दिखाया। उन्हें संदेह था कि चर्च के कामों में संलग्न रहते हुए ऐसा पद स्वीकार करना उचित नहीं रहेगा।

उन दिनों अफीम का नशा एक बहुत बड़ी सामाजिक बुराई बना हुआ था। लेकिन ब्रिटिश शासक, लोगों के स्वास्थ्य तथा समाज पर पड़ने वाले बुरे प्रभाव के बावजूद, अफीम के व्यापार पर कोई रोक नहीं लगाना चाहते थे।

रेवरेंड निकोल्स राय को इन अफीमंचियों के संपर्क में आने का अवसर मिला तो इनकी बुरी हालत देखकर वे बहुत विचलित हो गए। उन्हें इस बात का आभास था कि इस बुराई को फैलने से यदि रोका नहीं गया तो इससे न केवल व्यक्तियों तथा परिवारों का जीवन बरबाद हो जाएगा बल्कि पूरा समाज दुष्प्रभावित होगा। रेवरेंड निकोल्स राय ने अनुभव किया कि इसके दुष्प्रभाव को रोकने के लिए अफीम की बिक्री पर प्रतिबंध लगाने वाले कानून बनाने होंगे। अतएव, विधान परिषद में उन्होंने गैर-सरकारी सदस्य का विधेयक प्रस्तुत किया ताकि अफीम की बिक्री को रोका जा सके। इसी विधेयक में यह प्रावधान भी रखा गया था कि अफीम के व्यापार में लगे लोगों के खिलाफ कठोर कानूनी कार्रवाई की जा सके।

इसी दौरान चर्च संबंधी उनके कामों का बहुत विस्तार हो गया था और धर्म-प्रचारक के रूप में सभी जगह उनकी मांग बढ़ गई थी। इसके अलावा उन्होंने एक

नए चर्च की नींव रखी। वे इसका स्वरूप इंडियाना (संयुक्त राज्य अमेरिका) की एक चर्च संस्था के अनुभवों के अनुरूप निर्धारित करना चाहते थे। उनके द्वारा स्थापित चर्च आफ गॉड ने अपनी जड़ें जमानी शुरू कर दी थीं और उनके अनुयायियों की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ने लगी थी।

ऐसे व्यस्त समय में गवर्नर सर जान कर्र ने उन्हें मंत्रिमंडल में शामिल होने का निमंत्रण दिया था। रेवरेंड निकोल्स राय ने उनसे कहा : "इसमें शामिल होने से पहले मेरी दो या तीन शर्तें होंगी। मैं सुसमाचार का प्रचारक हूं, मुझे अपना प्रचार कार्य करते रहने की छूट होनी चाहिए। दूसरे, मैंने विधान परिषद में अफीम की बिक्री को रोकने संबंधी गैर-सरकारी सदस्य के रूप में एक विधेयक प्रस्तुत किया हुआ है। अतः यदि मैं सरकार का सदस्य बन जाता हूं तो इसे एक सरकारी विधेयक के रूप में प्रस्तुत करने की मुझे अनुमति होनी चाहिए ताकि अफीम का व्यापार रोका जा सके।" गवर्नर ने उत्तर दिया : "जहां तक सरकारी विधेयक प्रस्तुत करने का सवाल है, मैं इसकी स्वीकृति देता हूं। पर नियमों के अनुसार, सरकारी सदस्य को कोई अन्य काम करने की अनुमति नहीं होती और न ही दूसरी जगह से वह कोई भुगतान ले सकता है।" रेवरेंड निकोल्स राय ने कहा : "मुझे चर्च से कोई राशि नहीं मिलती; सो भुगतान लेने का प्रश्न ही नहीं उठता। पर जहां तक प्रचार संबंधी आह्वान का प्रश्न है, इसे मैं जारी रखूंगा।" गवर्नर ने उत्तर दिया कि यह मेरे अधिकार-क्षेत्र से बाहर की बात है। इसके लिए हमें उच्च प्राधिकारी से अनुमति लेनी होगी। रेवरेंड निकोल्स राय के दिलचस्प उत्तर से उनकी दृढ़ता तथा चारित्रिक गुण का परिचय मिलता है। उन्होंने कहा : "क्योंकि नियम मनुष्य द्वारा निर्मित हैं, अतः मनुष्य इनमें अपवादों को भी शामिल कर सकता है। यदि आप मुझे परिषद में शामिल करना चाहते हैं तो मेरी यह शर्त माननी होगी।" गवर्नर ने समझदारी बरतते हुए कहा : "मैं अनुमति पाने के लिए इंग्लैंड पत्र भेजूंगा।" रेवरेंड निकोल्स राय यह सोचते हुए घर पहुंचे कि धार्मिक कार्य करने और धर्म-उपदेशक के रूप में प्रचार करते रहने की उन्हें यदि अनुमति मिल जाती है तो वे सदन में शामिल हो जाने को ईश्वरीय इच्छा ही मानेंगे और यदि अनुमति नहीं मिलती तो इसे इस बात का संकेत मानेंगे कि उन्हें मंत्रिमंडल में शामिल नहीं होना चाहिए।

कुछ दिनों बाद ही सरकार को उत्तर मिल गया। रेवरेंड निकोल्स राय को गवर्नर के निवास पर आमंत्रित किया गया, जहां उन्हें बताया गया कि "अनुमति मिल गई है। आप अपना धार्मिक प्रचार-कार्य जारी रख सकते हैं – इस शर्त पर कि आप इस काम के लिए कोई राशि न लें और लोगों को प्रभावित करने के लिए अपने मंत्री होने का कोई गलत लाभ न उठाएं।" अतः रास्ता साफ हो गया था और 1927 में रेवरेंड निकोल्स

राय मंत्रिमंडल में शामिल हो गए। अफीम की बिक्री रोकने के लिए सरकारी विधेयक भी परिषद द्वारा स्वीकृत कर लिया गया और नशीली दवाओं से सामुदायिक जीवन को मुक्त करने की पहली बड़ी शुरुआत हुई। अफीम कानून के नाम से प्रसिद्ध इस कानून को पूरी गंभीरता से लागू किया गया। समाज के इस अनर्थ से छुटकारा दिलवाने की कोशिशें शुरू हो जाने पर लोगों ने राहत की सांस ली। रेवरेंड निकोल्स राय को समुदाय में एक समाज-सुधारक के रूप में भी मान्यता मिली और लोग उन्हें साहसी तथा नैतिक शक्ति से संपन्न एक महान व्यक्ति के रूप में पूजने लगे।

6

उत्तर-पूर्व के देशज लोगों के हिमायती

सभी सरकारों में से श्रेष्ठ वही है, जो हमें शासन करना सिखाए ।

–गेटे

रेवरेंड निकोल्स राय के संवेदनशील मस्तिष्क में यह बात अच्छी तरह बैठ गई थी कि पहाड़ तथा मैदान के लोगों की आकांक्षाओं का संश्लेषण करना प्राथमिक आवश्यकता है । उनके उदार दृष्टिकोण के अनुसार पहाड़ तथा मैदान के लोगों को, अपना अस्तित्व बनाए रखने तथा प्रगति करने के लिए, अपनी निजी प्रतिभा को ही काम में लाना होगा । उन्होंने इस बुनियादी धारणा को कभी ओझल नहीं होने दिया । अतएव, ब्रिटिश शासकों ने जब मार्च 1946 में समूह संविधान की योजना प्रस्तुत की तो उन्होंने इस बात को छिपाने की कोशिश नहीं की कि वे इस योजना के खिलाफ हैं । और तो और, वे उत्तर-पूर्वी सीमांत संरक्षित राज्य के गठन के भी पूर्णतया विरोधी थे–रेवरेंड निकोल्स राय ने ब्रिटेन की इस योजना को नकार दिया था कि असम घाटी जिला, सिल्हट तथा कछार जिलों को बंगाल में मिला दिया जाए । वे ब्रिटेन की 'फूट डालो तथा राज्य करो' की नीति को लागू करने के षड्यंत्र को समझ गए थे क्योंकि इस तरह राज्य के प्रशासनिक और राजनीतिक तंत्र पर उनका अधिकार मजबूत हो जाता और वे हमें "मानसिक रूप से गुलाम बनाने" में सफल हो जाते ।

एक खासी होने के नाते उन्हें अपने लोगों की सामाजिक तथा राजनीतिक परंपराओं पर गर्व था क्योंकि वे खासियों को अत्यंत सभ्य तथा उनकी परंपराओं को अद्वितीय सामाजिक-राजनीतिक संस्कृति का अंग मानते थे । वह मातृ सत्तात्मकता की सामाजिक प्रथा के प्रशंसक तो थे ही, उन जैसा बुद्धिजीवी ही, खासी राज्य व्यवस्था में निहित लोकतांत्रिक संस्कृति को भी, सहज ही समझ सकता था । समाज के सबसे निचले स्तर पर स्वशासन लागू हो जाने से सामुदायिक अथवा दरबार के मामलों में तब हर कोई अपनी बात कह सकता था ।

रेवरेंड निकोल्स राय एक देशभक्त खासी थे लेकिन उनकी देशभक्ति इतिहास की गहरी समझ तथा इस बोध पर टिकी थी कि एक सच्चे देशभक्त खासी को अनिवार्य रूप से भारतीय देशभक्त भी होना चाहिए। उनका देशप्रेम कबीले की संकीर्ण सीमाओं से बंधा हुआ नहीं था। ब्रिटिश राज में उन जैसे व्यक्ति के लिए इस कदर देशभक्त होना तथा ब्रिटिश शासन के खिलाफ साफ-साफ बोलना युग के प्रचलित आचरण से बिल्कुल मेल न खाने वाली बात थी। उन्होंने कैलिफोर्निया के प्रतिष्ठित गोरे परिवार की एक अमेरिकी महिला के साथ विवाह किया था, वे एक ईसाई थे, चर्च के नेता थे और उस पर रेवरेंड थे। रेवरेंड निकोल्स राय के लिए स्वाभाविक तो यह होता कि वह ब्रिटिश लोगों से खूब घुलमिल जाते और उच्च वर्ग का शानदार जीवन व्यतीत करते। पर कुलीन शासक वर्ग की जो सहज अपेक्षाए थीं, उसके विपरीत वे ब्रिटिश साम्राज्यवाद तथा भारत में ब्रिटिश कार्यशैली के विरोधी थे। वे तो मन से भारतीय राष्ट्रवाद एवं स्वाधीनता को अपना ध्येय मानते थे और इसके माध्यम से पहाड़ के लोगों तथा अपने समुदाय–खासी-जयंतिया – को स्व-शासन का दर्जा दिलवाना चाहते थे। तत्कालीन कांग्रेसी नेताओं के समान उन्होंने भी राजनीतिक तथा सामाजिक बोध को लेकर ब्रितानी लोगों के प्रति यह रवैया रखा कि ब्रितानी लोगों में कुछ विशिष्ट गुण तथा विशेषताए हैं, जो उनके अपने देश के लिए गर्व का विषय हैं। और यह भी कि उन्होंने प्रशासनिक ढांचे (न्यायिक एवं प्रशासनिक) को लेकर एक ऐसी पद्धति का विकास किया है जो उतनी ही प्रशंसनीय है। फिर भी, वे अपनी जड़ों को लेकर या अपने लोगों की सामाजिक पृष्ठभूमि के प्रति बहुत गर्व का अनुभव करते थे और इन्हें अति सभ्य मानते थे। इस विश्वास के बारे में उनका एक वाक्य इस समय याद आ रहा है : "हम लोगों (खासी) को अपने पड़ोसियों से कभी भय नहीं लगा।" ये शब्द उन्होंने तब कहे थे, जब ब्रितानी लोग खासी तथा अन्य जनजातियों पर 'पैतृक नियम' थोपने की कोशिश कर रहे थे। खासियों के लिए यह नियम घिनौना तो था ही, रेवरेंड निकोल्स राय के अनुसार यह नियम "जंगली और अर्ध-जंगली लोगों" के लिए ही उपयुक्त होता। उन्होंने खुलासा करते हुए कहा था : "पैतृक नियम बच्चे के संदर्भ में उपयुक्त हो सकता है, न कि वयस्क लोगों के संदर्भ में। राजनीति में यह जंगली लोगों के संदर्भ में ठीक है, न कि सभ्य लोगों के। खासी सभ्य लोग हैं। हम अपना नियमन खुद कर सकते हैं।"

रेवरेंड निकोल्स राय ने जनवरी 1946 में ब्रिटिश संसदीय शिष्टमंडल को दिए गए अपने ज्ञापन में, गर्व का अनुभव करते हुए, खासी लोगों के राजनीतिक संगठन एवं स्रोतों, व्यापार तथा शूरवीरता संबंधी उनकी शक्ति का उल्लेख करते हुए लिखा था :

"हम लोगों के अपने पड़ोसियों, असम घाटी और सूरमा घाटी के लोगों के साथ व्यापारिक संबंध हैं। जयंतिया लोगों ने, जो खासी वंश के ही हैं, बंगाली की एक बोली बोलने वाले सिल्हट जिले के निवासियों पर कभी राज किया है। चेरा राज्य के मुखियाओं का भी सिल्हट के बंगाली लोगों से संबंध रहा है और बाद में इसके कुछ पड़ोसी क्षेत्रों पर राज भी किया है। असम तथा सिल्हट जिलों के नजदीक रहने वाले अनेक खासी लोग वहां के जमींदार हैं।"

उन दिनों आर्थिक व सैन्य मामलों में खासी-जयंतिया लोगों की ऐसी धाक थी कि रेवरेंड निकोल्स राय भी खासी लोगों की तरह ही बेफिक्र अंदाज में बोलते थे क्योंकि ये लोग निडर तो थे ही, पड़ोसी क्षेत्रों में व्यापार करने व उन पर राज्य करने के लिए भी सदा तत्पर रहते थे।

ब्रितानी लोग इस व्यक्ति से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके क्योंकि वे खासी लोगों की प्रचुर आंतरिक शक्ति के बल पर ही बोलते व लिखते थे। इसके अलावा, रेवरेंड निकोल्स राय उत्तर-पूर्व क्षेत्र के पहाड़ी लोगों तथा असम घाटी के मैदानी लोगों के समर्थन में किए जाने वाले काम में अपनी भूमिका को लेकर भी बहुत सजग थे। इस काम में वे मिशनरी उत्साह से भाग ले रहे थे और ब्रितानी सत्ता में संलग्न लोगों को इस पर बड़ी हैरत होती थी। जब कभी पहाड़ तथा असम घाटी के लोगों की एकता का मामला उठा, उन्होंने अपनी बात कहने में कभी संकोच नहीं किया।

गारो पहाड़ियों पर बोलते समय रेवरेंड निकोल्स राय अतीत तथा भविष्य के इतिहास से प्रेरित राजनीतिक समझ का इस्तेमाल सहज ही कर लेते थे। लोगों को समझ लेने की रहस्यमयी शक्ति के कारण ही उन्होंने लिखा और कहा कि गारो की नियति खासी और जयंतिया लोगों से बंधी है। यह ऐसा था कि उन्हें ढाई दशकों बाद होने वाली घटना का मानो पूर्वाभास हो गया था अर्थात खासी-जयंतिया पहाड़ियों और गारो पहाड़ियों को मिलाकर गठित मेघालय राज्य की स्थापना। संभवतया उन्होंने गारो की सामाजिक पद्धति एवं जीवन-शैली, रवैये व सगोत्रता का अध्ययन किया था। लोगों को इस बारे में उनके विचारों का ठीक-ठीक पता नहीं है, लेकिन 1946 में ही उन्होंने लिख दिया था कि "गारो पहाड़ियां खासी और जयंतिया पहाड़ियों को छूती हुई हैं और असम की विधान परिषद में शामिल हैं। इन्हें (गारो पहाड़ियों को) प्रस्तावित उत्तर-पूर्वी सीमांत प्रांत में सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए। इससे गारो पहाड़ियों में प्रगति की गति रुक जाएगी।"

इसी तरह रेवरेंड निकोल्स राय नागा पहाड़ियों, लुशाई पहाड़ियों (मिज़ोरम) और परा-सीमांत भू-भाग (अरुणाचल प्रदेश) को असम प्रांत से अलग करने एवं प्रस्तावित

उत्तर-पूर्वी सीमांत प्रांत के साथ जोड़ने का जोरदार विरोध कर रहे थे। उनका मानना था कि ब्रिटिशराज के संरक्षित राज्य में उत्तर-पूर्व के इन असंख्य लोगों की अस्मिता संकट में पड़ जाएगी। वे चाहते थे कि इन सभी पहाड़ी क्षेत्रों की अस्मिता असम तथा भारत में रहते हुए भी अलग से बनी रहे। यह बड़े सौभाग्य की बात है कि नागा पहाड़ियों, लुशाई पहाड़ियों तथा परा-सीमांत भूभाग के नेताओं ने रेवरेंड निकोल्स राय में अपना विश्वास कायम रखा। वे बेशक पहाड़ के लोगों के चैंपियन थे।

वे किस तरह के व्यक्ति थे, इसका पता तब चलता है जब रेवरेंड निकोल्स राय ने असम घाटी, सिल्हट और कछार जिलों को बंगाल में मिलाने की ब्रितानी चाल का मुकाबला किया था। वे अपनी पूरी ताकत के साथ इस योजना के खिलाफ लड़े थे। "असम घाटी के जिलों के साथ ऐसा व्यवहार अन्यायपूर्ण होगा", उन्होंने ऊंची और स्पष्ट आवाज में कहा था।

यह दिलचस्प ही है कि रेवरेंड निकोल्स राय असम के लोगों के प्रवक्ता बनकर लिखते और बोलते रहे। उनका दृष्टिकोण व रवैया सर्वग्राही था।जब उन्होंने समूह योजना का विरोध किया तो यह डर प्रकट किया था कि इससे संभवतया "असम की संस्कृति और भाषा का सर्वनाश हो जाएगा।" उन्हें लगता था कि उस समय होने वाला कोई भी विभाजन, मैदान तथा पहाड़ के लोगों के, बुनियादी हितों को हानि पहुंचाएगा। बांग्ला भाषा बोलने वालों के सिल्हट जिले के बारे में वे मानते थे कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की यह नीति है कि जिन क्षेत्रों में समान भाषा बोली जाती है, वह एक प्रांत में रखे जा सकते हैं। इसलिए सिल्हट जिले को लेकर उनका रुख कड़ा नहीं था। लेकिन असम घाटी के क्षेत्र का मामला कुछ दूसरा था। उनकी राय थी, "यह घोर अन्यायपूर्ण होगा।" उन्होंने इस बारे में साफ-साफ कहा था, "असम घाटी के पहाड़ी तथा मैदानी क्षेत्रों के लोग इस योजना के खिलाफ हैं।"

ब्रितानी चाल की रूपरेखा उच्च अधिकारियों के दिमाग की उपज थी और दिल्ली के उच्च पदस्थ अधिकारियों के इशारे पर सोची गई थी। क्लीमेंट एटली के नेतृत्व में बनी ब्रिटेन की लेबर पार्टी की सरकार ने भारतीय नेताओं को सत्ता सौंपने की अपनी इच्छा का संकेत दे दिया था क्योंकि भारतीय जनता की संघर्ष करने की मनोकामना तथा द्वितीय विश्वयुद्ध (1939-45) के कारण उत्पन्न दुर्बलता को उसने समझ लिया था। हालांकि इस युद्ध में ग्रेट ब्रिटेन की विजय हुई थी लेकिन मुख्य विश्व शक्ति के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ ने वह स्थान प्राप्त कर लिया था। ब्रिटेन की राजनीतिक कार्यकारिणी तो भारतीय भूमि को यथासंभव जल्दी छोड़ देने के पक्ष में थी लेकिन यहां का नौकरशाही तंत्र भारतीय रियासतों तथा उत्तर-पूर्व क्षेत्र के

पहाड़ी इलाकों में संरक्षित राज्यों के रूप में ब्रितानी उपनिवेश बनाने के मास्टर प्लान पर काम कर रहा था। आर्थिक लाभ के कामों में संलग्न ब्रितानी लोग तथा उनके समर्थक यह चाहते थे कि जहां तक संभव हो, अपने पांव जमाने से पहले वे ब्रितानी ताज में जड़े हीरे, भारत, को न छोड़ें। रेवरेंड निकोल्स राय स्वतंत्रता-पश्चात के भारत के प्रति भी ब्रितानी नौकरशाहों तथा ब्रितानी राजनेताओं के संभावित रवैये को लेकर कुछ अनुमान लगा पाए थे। राजनीतिज्ञ तो अपनी नीतियों के बारे में बिल्कुल स्पष्ट थे लेकिन नौकरशाह तथा सेना उन इकाइयों से ब्रितानी संबंध बनाए रखना चाहती थी, जहां यह संभव हो सकता था। रेवरेंड निकोल्स राय ने ब्रितानी नेताओं के उदार दृष्टिकोण तथा अधिकारियों की स्वार्थी तथा अंहकारी मानसिकता में बनी गहरी खाई को देखा। यही कारण है कि उन्होंने, भले ही रणनीति के रूप में, अपना दृष्टिकोण स्पष्ट कर दिया था कि ब्रितानी संसदीय शिष्टमंडल के सदस्य ओछी तथा स्वार्थी राजनीति से ग्रस्त नहीं हैं। उन्होंने लिखा था : "मुझे इस बात पर पूरा यकीन है कि आप जैसे ब्रितानी राजनेता स्थानीय ब्रितानी अधिकारियों द्वारा सुझाए गए प्रतिगामी कदमों को सहन नहीं करेंगे। इनमें से कुछ तो ऐसे हैं कि इंग्लैंड के ब्रितानी लोगों के बड़े दिल के साथ न्याय नहीं कर पाएंगे।"

असम प्रांत को समाप्त कर उसे विभाजित करने की योजना का तात्पर्य यह होता कि इसकी सीमाओं को पुनः परिभाषित कर एक ओर बृहत बंगाल तथा दूसरी ओर पहाड़ी इलाकों को मिलाकर उत्तर पूर्वी सीमांत संरक्षित राज्य का गठन कर दिया जाता। समूह संविधान के बारे में सोचने वाले शातिर लोगों का एक तर्क यह था कि प्रांत के रूप में असम बहुत छोटा पड़ता है और आर्थिक दृष्टि से घाटे का सौदा है; ब्रितानी अधिकारियों ने जो दिशानिर्देश निश्चित किए हैं, उस पर यह घटक न तो मजबूत होगा, न ही व्यवहार्य सिद्ध होगा। इन तर्कों का खंडन करते हुए रेवरेंड निकोल्स राय मानते थे कि जब भारत को स्वतंत्रता मिलने ही वाली है तो किसी राज्य को प्रशासन के आधार पर पुनर्गठित करने जैसे बड़े निर्णय पर ब्रिटेन की संसद को अपना निर्णय थोपना नहीं चाहिए। हमारा निर्णय भारतीय नेताओं द्वारा स्वतंत्रता के बाद गठित होने वाली भारतीय संसद में ही होना चाहिए। इसके अलावा, उन्होंने तर्क दिया कि किसी भी प्रांत के गठन का आधार मात्र आकार अथवा जनसंख्या नहीं हो सकता। उन्होंने लिखा था :

> "आस्ट्रेलिया में, मेरा विचार है, तस्मानिया की जनसंख्या केवल 20 लाख ही है। पर यह एक पूर्ण राज्य है और वहां के गवर्नर का चुनाव राज्य खुद करता है। असम तथा पहाड़ी क्षेत्रों में कुल जनसंख्या 70 लाख होगी। यह जनसंख्या एक अलग राज्य बनाने के लिए पर्याप्त है। पूरे आस्ट्रेलिया की कुल आबादी 75 लाख

है, जबकि वहां कई गवर्नर हैं। जनसंख्या के आधार पर असम को अलग राज्य बनाने से रोका नहीं जा सकता।"

उत्तर-पूर्व के देशज लोगों के हिमायती इलाके के मामले में रेवरेंड निकोल्स राय की दिलचस्पी बहुआयामी थी क्योंकि वे मानते थे कि इस क्षेत्र के लोगों का विकास – भले ही ये लोग पहाड़ अथवा मैदान के जनजातीय अथवा गैर-जनजातीय हों – यहां के समान भूगोल, अनुभव तथा इतिहास पर आधारित है। निश्चय ही वे इस क्षेत्र के देशज लोगों के पक्षधर थे।

7

जिला परिषद स्वायत्तता : एकता अथवा विघटन का हथियार

आप कोई कानून पास करवा सकते हैं, या फिर अपने पक्ष में मत प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन आप अगर लोगों के दिल और दिमाग को नहीं जीत सके तो इस सबका क्या लाभ है।

–पी.वी.नरसिम्हा राव

एक बार फिर 6 सितंबर 1949 को नई दिल्ली के संविधान कक्ष में लौटें, जहां डा.राजेंद्र प्रसाद अध्यक्षता कर रहे हैं। कार्यसूची में छठी अनुसूची पर विचार-विमर्श करना शामिल है। इसमें सभी को बोलने की छूट थी। असम के सदस्य कुलाधर चलिहा ने पहला हमला किया और बिना किसी संकोच के कहा कि यह योजना ब्रितानी दिमाग की उपज है ताकि असम के लोगों से जनजातियों को अलग-थलग कर दिया जाए और फिर चेतावनी दी, "आप इसे उसी तरह कबीलास्तान बना देंगे जैसे कि आपने पाकिस्तान बनाया था।" अपनी जहर उगलती वाणी में उन्होंने हमला जारी रखते हुए कहा :

> "कहा गया है कि वे (जनजातियां) प्रजातांत्रिक लोग हैं, बदला लेने के मामले में प्रजातांत्रिक; प्रजातांत्रिक इस अर्थ में कि वे कानून को पहले अपने हाथ में ले लेते हैं। यदि कोई इसे चुनौती देता है, तो वे इतने प्रजातांत्रिक हैं, कि वे उसका सिर ही धड़ से उड़ा देंगे... यह बेकार और फालतू की धमकी है। हमें कुछ लोगों की ऐसी धमकियों से डरना नहीं चाहिए कि वे हम पर धावा बोल देंगे। कुछ लोगों की धमकियों की वजह से ही इसे हम पर थोपा जा रहा है और हमें ऐसे निहित स्वार्थों वाले व्यक्तियों से सावधान रहना चाहिए।"

चलिहा ने अपना वक्तव्य समाप्त करते हुए कहा कि "इस अनुसूची की रूपरेखा कुछ इस तरह सोची गई है कि यह सरकार के अस्तित्व को ही नकार देती है।"

इस बात को आगे बढ़ाते हुए उड़ीसा के एक सदस्य बी. दास ने रेवरेंड निकोल्स राय पर पुरानी व्यवस्था को ही कायम रखने का आरोप लगाया। उन्होंने उन पर "दो राष्ट्रों के सिद्धांत" का पक्षधर होने का आरोप लगाया। निस्संदेह, यह एक अनुचित प्रहार था। दास ने अपनी निंदाजनक भाषा को जारी रखते हुए कहा : "मैं छठी अनुसूची के प्रावधान से नफरत करता हूं क्योंकि आप जीवन की आदिम परिस्थितियों को बनाए रखना चाहते हैं... ब्रितानी गुप्तचर, ब्रितानी तथा अमेरिकी मिशनों और समुदायों की मदद से, इन जनजातीय क्षेत्रों में घुसपैठ कर रहे हैं और इसके लिए रेवरेंड निकोल्स राय को ही दोषी ठहराया जाएगा।" रेवरेंड निकोल्स राय मौन तथा शांत बैठे रहे। दास यही बात कहकर चुप नहीं हुए। उन्होंने जब आत्मनिर्णय के सिद्धांतों तथा दायित्वों पर बोला, तब भी अपना यह हमला जारी रखा।

दास ने "संसदीय जीवन के दायित्वों पर विस्तार से बोलते हुए कहा कि "योग्य, बुद्धिमान, न्यायी तथा साक्षर व्यक्तियों को ही इसकी जिम्मेदारी संभालनी चाहिए। कबीलों के हाथ में व्यापक राजनीतिक शक्ति दे देने से देश के कोने-कोने में अव्यवस्था, अराजकता और उपद्रव फैल जाएगा।" अपनी कठोर वाणी को जारी रखते हुए उन्होंने आगे कहा :

> "मुझे भी इस सवाल का सामना करना पड़ सकता है और 'मैं तब क्या जबाव दूंगा, यदि ये कबीले सामने आकर कहने लगें कि हमें राजनीतिक स्वायत्तता चाहिए और जिला तथा क्षेत्रीय परिषदों के भी सभी अधिकार चाहिए ? मैं उनकी यह मांग कभी नहीं मानूंगा। मैं आत्मनिर्णय के सिद्धांत के पक्ष में नहीं हूं। मैं तो अधिकतम लोगों के अधिकतम भले के सिद्धांत को मानता हूं। मैं भारत के हित को कबीलों की वेदी पर बलि नहीं चढ़ाऊंगा। आत्मनिर्णय के सिद्धांत से यूरोप में बहुत बरबादी हुई है। इसी की बदौलत मैंने अपने जीवनकाल में दो-दो विश्वयुद्ध देखे हैं। इसी की वजह से भारत विभाजित हुआ ; आगजनी, लूटपाट, हत्याएं हुईं और औरतों व बच्चों के साथ क्रूरतम अपराध हुए। इसके ही परिणामस्वरूप महात्मा गांधी की हत्या हुई।"

शब्दों का यह प्रहार अबाध गति से जारी रहा। रोहिणी कुमार चौधरी ने कहा, "हम जनजातियों को अपने में सम्मिलित करना चाहते हैं... लेकिन मुझे आदिवासियों से मिलने की अनुमति नहीं है और उधर आदिवासियों को मुझसे जुड़ने की अनुमति नहीं है। हमारे दोस्त श्री निकोल्स राय स्वायत्त जिले के गठन की जोरदार मांग कर रहे हैं। आपको स्वायत्त जिला क्यों चाहिए ?"

चौधरी-मानते थे कि स्वायत्त जिले के कारण जनजातियां शेष भारत से कट

जाएंगी। उन्होंने इस पर प्रश्नचिह्न लगाते हुए कहा :

"आप स्वायत्त जिलों का गठन कर, इन्हें हमसे विलग क्यों करना चाहते हैं क्योंकि तब वे पूर्णतया स्वायत्त हो जाएंगे। आप आदिवासी और गैर-आदिवासी लोगों को परस्पर मिलाना चाहते हैं अथवा उन्हें विलग करना चाहते हैं ? यदि आप उन्हें विलग कर देते हैं तो वे तिब्बत के साथ मिल जाएंगे, बर्मा के साथ मिल जाएंगे लेकिन शेष भारत के साथ कभी नहीं मिलेंगे–यह बात मैं शर्तिया तौर पर कह सकता हूं।"

उनका मानना था कि जनजातियों को स्वायत्त जिला दे देने से शेष देशवासियों के हित को बहुत नुकसान होगा। उनकी अपरिपक्व बुद्धि यह सोचती थी कि जनजातियां जिला परिषदों को, भारत को परस्पर-विरोधी छोटे-छोटे राज्यों में बांटने के लिए, हथियार की तरह इस्तेमाल करेंगी। निस्संदेह बाद के वर्षों के इतिहास ने चौधरी की इस धारणा को गलत साबित किया। लेकिन उनके द्वारा अंतिम रूप से कहे गए उग्र शब्दों को यहां याद दिलाना रोचक होगा। उन्होंने कहा था :

"स्वायत्त जिला एक ऐसा हथियार है जिसकी मदद से जनजातीय लोगों को गैर-जनजातीय लोगों से सदा के लिए अलग कर दिया जाएगा और स्वतंत्रता के बाद इनमें परस्पर जिस मैत्री-भाव के पुष्ट होने की हम अपेक्षा करते हैं, वह छिन्न-भिन्न हो जाएगा। अंग्रेजों की सत्ता के दिनों में हमें इन लोगों के बीच अपनी संस्कृति का प्रचार नहीं करने दिया गया था। अंग्रेजों के चले जाने के बाद भी हम डा.आंबेडकर के नए संविधान में वैसी स्थिति बनते हुए फिर से देख रहे हैं।"

अनुसूचित जातियों और जनजातियों के प्रवक्ता डा. आंबेडकर तक को इस प्रहार का निशाना बना दिया गया। रेवरेंड निकोल्स राय तथा डा.बी.आर.आंबेडकर दोनों अपनी बात पर अटल रहे और विरोध के आगे बिल्कुल नहीं झुके। एक दशक बाद की घटनाओं से स्पष्ट हो गया कि असम के कुछ धर्मांध लोगों द्वारा असमिया को सरकारी भाषा बनाकर जनजातियों पर असम की संस्कृति जबरदस्ती थोपने के फलस्वरूप एक व्यापक आंदोलन के बाद पहाड़ी क्षेत्रों को असम से अलग करने की मांग उठ खड़ी हुई थी। विधान परिषद में रेवरेंड निकोल्स राय ने अनुभव किया कि यह लड़ाई या तो अभी या फिर कभी नहीं का स्वरूप ले चुकी है।

नेतृत्व के दूसरे छोर पर कुछ सदस्य चाहते थे कि स्वायत्त जिला परिषदों के माध्यम से जनजातियों के एकीकरण की मांग संवैधानिक तरीके से पूरी की जाए। इस मांग के पक्ष में संविधान निर्माता डा.बी.आर.आंबेडकर के अलावा अन्य प्रमुख व्यक्तियों में से

थे–मुख्यमंत्री गोपीनाथ बारदोलोई तथा जयपाल सिंह। बारदोलोई को जनजातियों की अवस्था, जीवन शैली, मनोविज्ञान और विशेषकर अपनी अस्मिता को बनाए रखने एवं अपनी संस्कृति व परंपरा के अनुकूल विकास करने की महत्वाकांक्षा के बारे में विशद ज्ञान था। वे जनजातियों की राजनीतिक संस्कृति, विशेषकर इसके जनतांत्रिक स्वरूप, के बहुत प्रशंसक थे और उनका विश्वास था कि 'किसी उदासीन विद्यार्थी तक के मन में इसके लिए प्रशंसा का भाव उठने लगेगा।' बारदोलोई ने परिषद को बताया था कि आदिवासी जिस तरह अपने झगड़ों को निपटाते हैं, वह तरीका अद्वितीय है। उन्होंने प्रशासन के ढांचे को बनाने के लिए इन आदिवासियों से सहयोग लेने की सिफारिश की, न कि असम राइफल्स अथवा सेना द्वारा प्रयुक्त शक्ति के प्रयोग करने की। वह इस इलाके के संवेदनशील होने की बात समझते थे, जहां ब्रिटिश सत्ता के समय लोगों के मन में "अलगाव एवं विभाजन के विचार भर दिए गए थे।"

उन्होंने विधान परिषद से अपील की कि स्वायत्त परिषद योजना से वर्तमान जनतांत्रिक, पारंपरिक संस्थाएं मजबूत होंगी और इसे संवैधानिक समर्थन मिलना ही चाहिए। अतएव, "हम कुछ बहुत ज्यादा नहीं दे रहे हैं जैसा कि मेरे कुछ मित्रों ने इशारा किया है।" उन्होंने अपने भाषण का यह कहते हुए समापन किया कि "ऐसा कुछ भी प्रस्तावित नहीं है, जो संविधान के पैटर्न व ढांचे के अनुकूल न हो और जिसे सारे भारत के लिए हम बना रहे हैं। यदि इसमें कोई असंगति थी भी तो उसे दूर कर दिया गया है।"

जयपाल सिंह ने संविधान में जिला परिषद स्वायत्तता के प्रावधान के विरोधी सदस्यों के भाषणों की विषयवस्तु तथा अभिप्राय पर करारा कटाक्ष किया। उन्होंने सदन को सूचित किया कि जब जनजातीय समिति की बैठक हुई थी तो उसमें सरदार वल्लभभाई पटेल ने स्पष्ट कर दिया था कि उन्होंने समिति की सिफारिशों को क्यों अपनी स्वीकृति दी है, जो उनके अनुसार, बहुत कठिनाई तथा लंबी बातचीत के बाद तय की गई थीं। सचाई तो यह है कि असम के आदिवासी लोगों पर इन सिफारिशों को मान लेने के लिए बहुत दबाव डाला गया था।

जयपाल सिंह के अनुसार, भारत की तरफ से यह पक्का आश्वासन मिला हुआ था कि उन्हें लागू करने में कोताही नहीं बरती जाएगी। उन्होंने चेतावनी देते हुए कहा कि यदि जनजातियों के साथ जोर-जबरदस्ती की गई कि वे उन बातों को भी मान लें, जो वे नहीं चाहते तो इसके फलस्वरूप सामाजिक तथा राजनीतिक अशांति फैल सकती है। उन्होंने सुस्पष्ट शब्दों में कहा, "आप कोई निराकरण तो खोज नहीं पाएंगे, हां, भारत को आप विखंडित जरूर कर देंगे।" जयपाल सिंह ने सदन को याद दिलाया

कि आदिवासी अपने वादे पर कायम रहते हैं । उन्होंने आग्रह किया कि हमें राजनीतिज्ञता अपनानी चाहिए, न कि सस्ती लोकप्रियता । असम के आदिवासियों की नीयत पर शक करने से किसी का भला होने वाला नहीं है । "क्या मेरे दोस्त यह कहना चाहते हैं कि नागा लोग अपने वादे पर कायम नहीं रहेंगे ? क्या आपका मतलब यह है कि लुशाई पहाड़ियों के लोग हमें धोखा देने की कोशिश कर रहे हैं ? नेताओं और आदिवासी उप-समिति के बीच अच्छी समझदारी है, जिन्होंने यहां का दौरा किया था । तब यह शक क्यों है ?" उन्होंने पूछा । उन्होंने इन दोनों में परस्पर पुल बनाने और रेवरेंड निकोल्स राय जैसे जनजातीय नेता की निंदा न करने की जोरदार सिफारिश की क्योंकि वे लोगों की भलाई भले ही नृजातीय आधार पर सोचते हों, पर वह राष्ट्रवादी भी हैं । उन्होंने कुछ वक्ताओं के इस विचार का मजाक भी उड़ाया कि आदिवासी भारत से बाहर जा रहे हैं । उन्होंने सदस्यों से अपील की कि आदिवासी लोगों के बारे में बात करते समय वे उदार रहें और इन्हें भारत का शत्रु नहीं मानें । उन्होंने अभी तक अभिव्यक्त विचारों से अपनी जोरदार असहमति जताई क्योंकि :

> "कुछ लोगों के मन में ऐसे ही विचार उमड़-घुमड़ रहे हैं । उनका सोचना है कि ये लोग भारत से बाहर चले जाएंगे और बर्मा अथवा साम्यवादियों अथवा ऐसी ही किसी शक्ति के साथ मिल जाएंगे । ... मैं असम के भविष्य के प्रति बहुत आशावादी नहीं हूं, तब भी, यदि छठी अनुसूची, सारी कमियों के बावजूद, उसी भावना से लागू की जाती है जैसा कि उसे लागू किया जाना चाहिए–सहायता करने की भावना तथा असम के पहाड़ी लोगों की सेवा करने की सच्ची इच्छा के साथ, इन लोगों को हमवतन मानकर तथा इन्हें अपने में शामिल करने की इच्छा के साथ, इन लोगों को अपने से बाहर न जाने देने की कोशिश के साथ और यह भी कि हम इन लोगों के लिए कैसा भी त्याग करने के लिए राजी हैं ताकि ये हमारे साथ ही रहें ।"

जयपाल सिंह ने, संविधान के एक संस्थापक-निर्माता के रूप में देश को एक नई दिशा प्रदान की, जब उन्होंने विधान सभा के सदस्यों से यह अपील की कि असम के जनजातीय लोगों के साथ सम्मान, समझदारी तथा उन्हें हमवतन मानकर व्यवहार किया जाए, उन्हें नए तथा समृद्ध भारत के निर्माण का समान भागीदार माना जाए ।

यद्यपि छठी अनुसूची को शामिल करवाने के बारे में भारत के संविधान-निर्माता डा.बी.आर.आंबेडकर की महत्वपूर्ण भूमिका के बारे में लोग जानते हैं, पर हर कोई यह जानने का इच्छुक जरूर होगा कि 5 सितंबर 1949 की बहस में उनकी प्रतिक्रिया क्या थी–विशेष रूप से ब्रजेश्वर दास द्वारा अभिव्यक्त विचारों के संदर्भ में । इस सदस्य ने

छठी अनुसूची में 49 संशोधन प्रस्तुत किए थे। इन संशोधनों को मान लेने का प्रभाव यह होता कि असम के जनजातीय इलाके केंद्र के अधीन बने रहते। उनका मानना था असम सीमावर्ती तथा संवेदनशील राज्य है और उसकी सीमाएं चीन, तिब्बत, बर्मा और पाकिस्तान से लगती हुई हैं, अतएव जनजातीय क्षेत्रों को असम तक परिसीमित कर देने से देश का अहित होगा। उन्होंने असम में परस्पर संघर्ष के अनेक मामलों का उल्लेख भी किया, जैसे कि अहोम व असमी, बंगाली और मुसलमान, असमी और बंगालियों के बीच के मंगोली, आदिवासी और गैर-आदिवासी। उन्होंने जोर देते हुए कहा कि रणनीति, सैन्य और राजनीतिक दृष्टि से ऐसे विस्तृत भू-भाग को एक प्रांत को सौंप देना न तो उचित होगा, न ही सुरक्षित।

डा.बी.आर.आंबेडकर ने ब्रजेश्वर दास जैसे सदस्यों का भय यह कहते हुए दूर किया कि छठी अनुसूची का मसौदा समिति के सदस्यों, असम के मुख्यमंत्री गोपीनाथ बारदोलोई और रेवरेंड निकोल्स राय के बीच हुई लंबी बहसों तथा परस्पर सहमति के बाद ही तैयार किया गया है। उन्होंने स्पष्ट किया कि गवर्नर अपने निजी विवेक से नहीं, राज्य मंत्रिमंडल की सलाह से कार्रवाई करेंगे। डा. आंबेडकर ने यह भी स्पष्ट किया कि स्वायत्त जिले स्वतंत्र इकाई नहीं होंगे बल्कि यह असम प्रांत के अंग होंगे लेकिन साथ ही साथ छठी अनुसूची के अनुरूप उन्हें प्रशासनिक मामलों में स्वायत्तता भी प्राप्त होगी। उन्होंने स्वायत्त जिला परिषदों तथा "स्वायत्त क्षेत्रों" के बीच के अंतर को भी स्पष्ट किया, जो सीधे केंद्र सरकार के अधीन होंगे। अपने दृष्टिकोण पर दृढ़ रहते हुए डा. आंबेडकर ने कहा कि असम के आदिवासियों को न्याय मिलना चाहिए और उन्हें अपनी परंपराओं के अनुसार अपने मामले निपटाने की छूट मिलनी चाहिए।

8

जिला परिषद स्वायत्तता के जनक

अतीत हमारा है, लेकिन हम अतीत के नहीं हैं, हम वर्तमान के हैं । हम भविष्य के निर्माता हैं, लेकिन भविष्य हमारा नहीं है ।

–महात्मा गांधी

जहां तक असम के आदिवासियों के भविष्य का संबंध था, 6 सितंबर 1946 को संविधान सभा में हुई बहस अत्यंत स्मरणीय थी और जब रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय बोलने के लिए खड़े हुए तो उन्होंने अपने जोश, ज्ञान, तर्क तथा कायल कर देने वाली दलीलों से इसे अंतिम निष्कर्ष तक पहुंचा दिया । वे अपनी व्याख्या को लेकर आश्वस्त थे कि सदन इसे अपनी स्वीकृति अवश्य प्रदान करेगा क्योंकि वे जानते थे कि वे सही दिशा में चल रहे हैं ।

रेवरेंड निकोल्स राय ने इस धारणा का जोरदार विरोध भी किया कि आदिवासियों को दी गई स्वायत्तता का दुरुपयोग किया जाएगा । उन्होंने कहा :

> "यह कहना कि इन क्षेत्रों में छठी अनुसूची लागू करने से आदिवासी प्रतिकूल हो जाएंगे, यह आश्चर्य में डालने वाली बात है । यह विचार तथ्यों को गलत ढंग से समझने तथा पहाड़ व मैदान के लोगों को पास-पास लाने की समस्या को मनोवैज्ञानिक रूप से गलत तरह से समझने का परिणाम है । इस अनुसूची में पहाड़ के लोगों को स्व-शासन के कुछ अधिकार अवश्य दिए गए हैं लेकिन जिला परिषदों द्वारा बनाए जाने वाले कानूनों व नियमों पर असम सरकार का नियमन तथा स्वीकृति आवश्यक होगी । इससे अधिक समरूपता क्या होगी ? असम के आदिवासी इलाकों की उपसमिति ने सिफारिश की है कि छठी अनुसूची में उल्लिखित जिलों को अपनी संस्कृति तथा प्रतिभा के अनुरूप स्व-शासन की अनुमति होगी ... छठी अनुसूची के प्रावधानों से ये लोग कुछ हद तक संतुष्ट हैं और साथ ही शेष प्रांत से जुड़े रहने के लिए भी बाध्य करते हैं ।"

जिन लोगों का यह मानना था कि छठी अनुसूची ब्रितानी तथा अमेरिकी मिशनों के दिमाग की उपज है, उनके लिए रेवरेंड निकोल्स राय ने साफ शब्दों में कहा कि जनजातीय संस्कृति तथा प्रतिभा का वे अपमान न करें। जनजातीय नेतृत्व को बाहरी प्रभावों के असर में आने की जरूरत नहीं है, उन्होंने कहा और फिर यह जोड़ा :

"मैं खुद पहाड़ का व्यक्ति हूं और मैं क्या अनुभव करता हूं, यह मैं अच्छी तरह जानता हूं। ईसाई होने के नाते मैं सभी जगह भाईचारा देखना चाहता हूं। मैं सारे भारत में तथा जनजातीय लोगों में भी इसे फलीभूत होते देखना चाहता हूं। अतएव जब मैं इस सदन में बोल रहा हूं तो पहाड़ की जनजातियों की भावनाओं का ख्याल रखकर बोल रहा हूं। मैं सार्वजनीनता तथा मानवमात्र के भाईचारे को ख्याल में रखकर भी बोल रहा हूं। मैं सभी लोगों को समान स्तर तक ऊंचे उठाने का विचार मन में रखते हुए बोल रहा हूं।

"... लेकिन संस्कृति है क्या ? क्या इसका मतलब पोशाक या खानपान से है ? यदि इसका मतलब खानपान से है या जीवन शैली से है तो पहाड़ के आदिवासी दावा कर सकते हैं कि मैदान के कुछ लोगों की तुलना में उनकी रीति कहीं अच्छी है। मैं सोचता हूं कि मैदानी लोगों को उनके स्तर तक ऊपर उठना चाहिए। आदिवासियों में वर्ग और गोत्र का भेद नहीं किया जाता। राजा और प्रमुख भी साथ-साथ काम करते हैं। क्या मैदानी इलाकों में मजदूरों के साथ ऐसा व्यवहार किया जाता है ? समस्त भारत समानता के ऐसे स्तर पर अभी नहीं पहुंचा है। क्या आप ऐसी पद्धति को नष्ट कर देना चाहते हैं ? क्या आप इनका दमन करना चाहते हैं और क्या आप यह चाहते हैं कि इनकी संस्कृति को एक ऐसी संस्कृति मिल जाए, जो किसी आदमी को छोटा तो किसी को बड़ा बनाती है ?"

रेवरेंड निकोल्स राय ने कबीलों की संस्कृति पर और भी प्रकाश डालते हुए कहा :

"हिंदू गोमांस नहीं खाते लेकिन आदिवासी खाते हैं। मुसलमान सूअर का मांस नहीं खाते लेकिन आदिवासी खाते हैं। अतएव ये लोग न तो हिंदू कहे जा सकते हैं, न मुसलमान। सरकारी रिपोर्ट में कहा गया है कि पहाड़ के लोगों की अपनी संस्कृति है, जो मैदान के लोगों से बिल्कुल अलग है। सामाजिक संगठन का आधार गांव, गोत्र और कबीला है और सरंचना व दृष्टिकोण आमतौर पर जनतांत्रिक है। यहां जाति प्रथा या परदा प्रथा नहीं है और बाल विवाह का चलन भी नहीं है।

"पहाड़ के कबीलों की संस्कृति यही है। भारत को, इन आदिवासियों की समानता तथा असली जनतांत्रिक विचार अथवा भावना के स्तर तक, ऊपर उठना

चाहिए । हमें एक सेकेंड के लिए भी यह नहीं सोचना चाहिए कि ये लोग जनतांत्रिक तथा समानता की भावना का त्याग कर देंगे और किसी दूसरी संस्कृति द्वारा खुद को लील जाने देंगे जो उनकी संस्कृति से न केवल भिन्न है बल्कि उनके समाज को रास भी नहीं आती ।"

रेवरेंड निकोल्स राय ने असम के कबीलों पर ताकत इस्तेमाल करने या उन पर जोर-जबरदस्ती करने की व्यर्थता के बारे में भी कहा । वे इस बात के लिए सजग थे कि आदिवासी क्षेत्र सीमांत होने के कारण संवेदनशील हैं, अतः इन लोगों को संतुष्ट स्थितियों में रखना भी उतनी ही बड़ी अनिवार्यता है । उन्होंने अपनी यह बात पुरजोर शब्दों में कही :

"मानव का स्वभाव ही ऐसा है कि आप किसी बात को करवाने के लिए उसके साथ ताकत का इस्तेमाल करते हैं, तो वह किसी और ही तरफ चला जाता है । यदि आप भारत के हित में उन्हें अपनी तरफ करना चाहते हैं तो उनके मन में दोस्ती तथा एकता की भावना जगानी होगी ताकि उन्हें लगे कि उनकी संस्कृति व जीवन-पद्धति नष्ट नहीं कर दी जाएगी और उन पर जबरदस्ती दूसरी संस्कृति थोपी नहीं जाएगी ... यदि आप इस सदन के एक या दो सदस्यों द्वारा व्यक्त विचारों को ही मानना चाहते हैं तो इसका प्रभाव एकता को स्थापित करने वाला नहीं होगा बल्कि पहाड़ के कबीलों को शेष भारत से विच्छिन्न कर देने वाला प्रभाव होगा और यह निस्संदेह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी ।"

रेवरेंड निकोल्स राय अपने में आत्मसात कर लेने की नीति के किसी भी रूप के विरुद्ध थे क्योंकि वह प्रति-उत्पादक ही साबित होती । उन्होंने कबीलों की नृजातीय अस्मिता को कबूल करने तथा भारतीय संदर्भ में इसे प्रोत्साहित करने की दलील दी । "उच्च संस्कृति, उच्च विचार-सारिणी के आत्मसात्करण की प्रक्रिया से ही उन्नति होती है, न कि बल के प्रयोग से । लोग उन्नति को तब स्वीकार कर लेंगे, जब उन्हें, जो उनके पास है, उससे बेहतर को अपनाने की अनुमति हो ।" यह आत्मसात्करण, उस आत्मसात्करण संबद्धता से बिल्कुल अलग किस्म का था, जो दो-एक माननीय सदस्यों ने सुझाया था । उन्हें यह सोचते हुए गर्व का अनुभव होता कि पहाड़ के लोगों को इस बात का अहसास है कि उनकी अपनी गांव परिषद या फिर जिन्हें पंचायत भी कह सकते हैं, किसी नियमित न्यायालय की तुलना में कहीं ज्यादा बेहतर तथा उपयुक्त है । इसके अलावा, उनका कहना था, असम उच्च न्यायालय में जाना बहुत खर्चीला होता है । रेवरेंड निकोल्स राय मानते थे कि स्वायत्त जिलों की गांव परिषद पहाड़ के लोगों को अपने ही ढंग से शासन चलाने तथा अपना विकास करने में सहायक सिद्ध होगी ।

इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए ही उन्होंने ये सवाल उठाए थे : "आप लोगों को उस चीज से वंचित क्यों करना चाहते हैं, जो वे अपने लिए अच्छी समझते हैं और फिर उस चीज से किसी को कोई नुकसान भी तो नहीं पहुंच रहा ? इससे भारत का भी कोई नुकसान नहीं होगा। आप इन लोगों को अपने ही ढंग से विकास क्यों नहीं करने देना चाहते ? गांधीवादी सिद्धांत यह है कि सारे भारत में गांव पंचायतों को प्रोत्साहित किया जाए। अतएव पहाड़ के लोगों की जिला परिषदों के गठन की मांग को लेकर आपत्ति क्यों की जा रही है ? स्व-शासन से इन्हें महसूस होगा कि सारा भारत इनके प्रति सहानुभूतिशील है और भारत उन पर ऐसा कुछ भी थोपने नहीं जा रहा जिससे उनकी भावनाओं को ठेस पहुंचती हो और उनकी संस्कृति नष्ट होती हो।"

जनजातीय क्षेत्रों में, रेवरेंड निकोल्स राय ने कहा, आदमी और औरत में अंतर नहीं किया जाता। यही वजह है कि औरतें काम करती हैं, बाजार जाती हैं और सभी तरह के व्यवसाय करती हैं। औरत स्वतंत्र है। उन्होंने कहा कि असम के मैदानी इलाकों में कुछ ऐसे लोग भी हैं जिन्हें जमीन खोदने के काम में शर्म आती है। लेकिन पहाड़ के लोग ऐसा महसूस नहीं करते। रोहिणी कुमार चौधरी को उनका यह वक्तव्य आपत्तिजनक लगा और उन्होंने रेवरेंड निकोल्स राय पर मैदान के लोगों को बदनाम करने का दोष लगाया। रेवरेंड निकोल्स ने यह कहते हुए अपना बचाव किया कि "मैं किसी को भी बदनाम नहीं कर रहा। मैंने तो केवल तथ्य पेश किए हैं। हरेक जानता है कि असम में कुछ लोग मिट्टी नहीं खोदेंगे।" कुलाधार चलिहा ने रेवरेंड निकोल्स राय से कहा कि वे अपने शब्द वापस लें लेकिन अध्यक्षता कर रहे राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद ने अपना फैसला सुनाया कि "माननीय सदस्य ने ऐसी कोई बात नहीं कही जिसे वापस लेना पड़े। उन्होंने जो कुछ कहा है, वह औचित्यपूर्ण है।"

रेवरेंड निकोल्स राय ने अपनी बात की व्याख्या करते हुए कहा कि असम के आदिवासी क्षेत्रों में वे लोग भी, जो उच्च पदों पर आसीन हैं या समाज में जिनका दर्जा बहुत ऊंचा है जैसे कि राजा और मंत्री, अन्य लोगों की ही तरह काम करते हैं और यह सिद्धांत देश के अन्य भागों में दिखाई नहीं देता। उन्होंने फिर कहा, "भारत को उस ऊंचाई तक पहुंचना है, जहां श्रम की महिमा को माना जाता हो। यदि पहाड़ के लोगों में पहले से ही ऐसी संस्कृति विद्यमान है, तो संपूर्ण भारत के हित में उन्हें विकास करने तथा दूसरों के सामने आदर्श प्रस्तुत करने का अवसर क्यों न दिया जाए।"

उन वर्षों में, पहाड़ी क्षेत्रों में ऐसे नेता भी थे जो यह मानते थे कि जिला परिषद योजना का अर्थ है भारत के हाथों बिक जाना और परिणामस्वरूप आदिवासी लोग

अपनी अस्मिता खो बैठेंगे । वस्तुतया ऐसे नेता राजनीतिक स्थिति, औपनिवेशक शासन से मुक्त हो भारतीय स्वतंत्रता की प्राप्ति, को बिना समझे-बूझे स्वतंत्र दर्जे की वकालत कर रहे थे । वे ब्रिटिश संरक्षित राज्य तक की वकालत के पक्ष में थे । वे तो चाहते थे कि ब्रिटिश प्रशासन लंदन में होते हुए भी यहां उनकी रक्षा करे । रेवरेंड निकोल्स राय राजनीतिक यथार्थवादी थे । उन्होंने संविधान सभा में जिला परिषदों की शक्ति तथा अधिकार के बारे में जो कहा था, वह वर्तमान तथा भावी राजनीतिक विकास के बारे में उनकी समझ का प्रमाण था । उन्होंने अपना भाषण इस निष्कर्षात्मक वक्तव्य से समाप्त किया :

> "अपना वक्तव्य समाप्त कर बैठने से पहले मैं यह भी कहना चाहूंगा कि पहाड़ के लोग मानते हैं कि छठी अनुसूची के बावजूद उन्हें बहुत अधिक नियंत्रित कर दिया गया है और उन्हें वह सब कुछ नहीं मिल रहा, जो वे पाना चाहते हैं । मैं मानता हूं कि हममें से अनेक यह बात जानते हैं । असम के माननीय प्रधानमंत्री श्री बारदोलोई तक इस बात को जानते हैं, पर परिस्थितियों को देखते हुए हम इस समझौते के लिए सहमत हो गए हैं ताकि सभी पार्टियों में सहमति बनी रहे । अतएव यह नहीं सोचें कि पहाड़ी क्षेत्रों को बहुत अधिक कुछ मिल गया है । उनकी अपेक्षाओं के अनुसार उन्हें कुछ अधिक नहीं मिला है । साथ ही, ये असम के गवर्नर के नियंत्रण में आ गए हैं । इसी प्रक्रिया से ये संगठित हो जाएंगे ।"

रेवरेंड निकोल्स राय की प्रार्थना पर डा.बी.आर.आंबेडकर उस खतरे को समझ सके, जो संयुक्त खासी-जयंतिया पर्वतीय जिले से "राज्य क्षेत्र" को अलग करने में निहित था । डा. आंबेडकर ने सभा में रेवरेंड निकोल्स राय द्वारा प्रतिपादित विचार को ही आगे बढ़ाते हुए कहा :

> "मान लें कि यह क्षेत्र (मीलिएम राज्य क्षेत्र) संयुक्त खासी-जयंतिया पर्वतीय जिले से पूर्णतया अलग कर दिया जाता है, तो इसका परिणाम होगा कि यहां के लोग, जो मीलिएम राज्य के शेष भाग के लोगों से बुनियादी तौर से संबंधित हैं और जिनके विवाह कानून, रिवाज वगैरह समान हैं, तब वे सामान्य कानून को अपनाने के लिए विवश हो जाएंगे । वे उत्तराधिकार के सामान्य कानून, विवाह के सामान्य कानून और उन सभी सामान्य कानूनों को मानने के लिए विवश हो जाएंगे, जो देश की संसद या असम की विधान परिषद द्वारा समय-समय पर पारित होंगे ।"

डा. आंबेडकर ने बलपूर्वक कहा, "मैं इसे संगत नहीं मानता कि किसी स्थान के कुछ लोगों को इस तरह से अलग कर दिया जाए जबकि सजातीय समूह के रूप में उनमें समानता हो ।" वह रेवरेंड निकोल्स राय की इस बात से पूर्णतया सहमत थे

कि खासी-जयंतिया लोगों की एकता बनाए रखी जाए। रेवरेंड निकोल्स राय तो संविधान सभा, विभिन्न समितियों तथा अन्य मंचों पर भी श्रोताओं को अपने इस विचार से बार-बार अवगत करा चुके थे। वे अपने लक्ष्य के बारे में बिल्कुल स्पष्ट थे कि पहाड़ी लोगों की एकता बनाए रखकर तथा इन क्षेत्रों को एक विशिष्ट पहचान देकर ही संविधान में छठी अनुसूची को शामिल किया जाना चाहिए।

रेवरेंड निकोल्स राय को "स्वायत्त जिला परिषद के जनक" होने का श्रेय ठीक ही दिया जाता है। यद्यपि एक नगा नेता, ए.जेड.फिज़ों, रेवरेंड निकोल्स राय के सभी विचारों से सहमत नहीं। फिज़ों के मन में भारतीय नेताओं के प्रति अनेक संदेह तथा आशंकाएं थीं तथा उन्होंने स्वतंत्र नागालैंड की मांग रखी थी। रेवरेंड निकोल्स राय अहिंसा तथा शांतिपूर्ण विरोध के पक्षधर थे तो फिज़ो मानते थे इनसे हटकर दूसरे रास्ते ही अपनाने के लिए बचे हैं क्योंकि भारतीय नेता केवल वही भाषा समझते हैं। जब इन दोनों में मतभेद चरम पर पहुंच गया तो फिज़ो ने कटाक्ष किया, "ठीक है, हम दोनों फिर इस बात पर सहमत होते हैं। हम दोनों अलग-अलग नावों पर सवार हैं। यदि आप की नाव डूब जाती है तो रक्षा के लिए मैं आगे आऊंगा और यदि मेरी नाव डूबती है तो पहाड़ के लोग होने के नाते आप मेरी मदद के लिए आगे बढ़ेंगे। मैं भी वैसा ही करूंगा।"

इतिहास ने रेवरेंड निकोल्स राय को सही साबित किया। उनका नेतृत्व, भारत की नियति में उनका विश्वास और पहाड़ के लोगों से उनकी यह अपील कामयाब रही कि वे भारत के साथ रहें, न कि पाकिस्तान के। उन्होंने प्रशंसनीय दूरदृष्टि तथा समझदारी का परिचय दिया था। इसी तरह, अपने जीवन व चरित्र के अनुकूल, उन्होंने पहाड़ के लोगों को विभिन्न राजनीतिक मुद्दों पर गांधीजी की अहिंसावादी नीति अपनाने के लिए राजी कर लिया। रेवरेंड निकोल्स राय अपने काम में सफल रहे और पहाड़ के लोगों के मन में एक गहरी अहिंसावादी नींव रख दी कि भविष्य में भी अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते समय वे इसी पर टिके रहें। उनकी मृत्यु (1959) के एक वर्ष बाद आल पार्टी हिल लीडर्स कांफ्रेंस का गठन हुआ ताकि जनजातीय संस्कृति की रक्षा की जा सके और पर्वतीय राज्य के निर्माण की मांग के लिए संघर्ष किया जा सके। वस्तुतः छठी अनुसूची के अंतर्गत गठित स्वायत्त जिला परिषदों का गठन पहाड़ के लोगों के जन आंदोलन का आधार बना और रेवरेंड निकोल्स राय द्वारा बोए गए बीज एक वट वृक्ष में बदल गए। सन् 1970 के दशक में पर्वतीय राज्य एक यथार्थ बना। वर्तमान पीढ़ी पहाड़ के नेताओं के नेता रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय की सदैव ऋणी रहेगी।

9

संविधान तथा छठी अनुसूची

इस राष्ट्र में, ईश्वर की अनुकंपा से, स्वतंत्रता का नया जन्म होगा और फिर लोगों की सरकार, लोगों द्वारा लोगों के लिए इस धरती से नष्ट नहीं हो सकेगी।

–अब्राहम लिंकन

भारत के संविधान में छठी अनुसूची के प्रावधान को पूरी तरह समझने के लिए, असम के जनजातीय क्षेत्रों के उस इतिहास पर संक्षेप में विचार करना अनिवार्य होगा, जब समस्त उत्तर-पूर्व क्षेत्र असम के अंतर्गत आता था। सन् 1874 में असम की एक अलग प्रांत के रूप में स्थापना हुई थी। सन् 1905 में बंगाल का विभाजन किया गया और एक नया प्रांत पूर्वी बंगाल तथा असम अस्तित्व में आए। लेकिन 1912 में यह विभाजन उलट दिया गया, पर असम ने बंगाल में मिलने के बजाए अपनी अलग अस्मिता बनाए रखी और इस प्रकार असम एक अलग प्रांत बना। अब तो यह इतिहास की ही चीज बन चुकी है कि कुछ क्षेत्रों ने असम प्रांत से अलग होने के लिए कैसी जबरदस्त चालें चली थीं।

हमारे मुख्य विषय अर्थात जनजातीय क्षेत्र बनाम असम पर विचार करने से पहले यहां भारत सरकार तथा प्रांतों के परस्पर संबंधों पर संक्षेप में चर्चा करना उपयोगी होगा।

केंद्र तथा प्रांतों के परस्पर संबंधों के मामले में 1921 तक यह व्यवस्था थी कि सर्वोच्च प्राधिकार गवर्नर-जनरल में निहित था। प्रांतीय सरकारें उसकी एजेंट मात्र थीं। इसमें स्व-शासन के तत्व बिल्कुल नहीं थे ; वित्तीय नियंत्रण पूर्णतया भारत सरकार के हाथों में था – उन मामलों के लिए भी, जो प्रांतों के अधीन थे। विधायी मामलों में नियंत्रण इतना कठोर नहीं था ; तथापि केंद्र से प्रांतीय प्राधिकरणों में सत्ता के केंद्रीकरण से, प्रांतीय स्तर पर द्वितंत्र प्रवेश कर गया था। प्रशासन के लिए दो तरह के विषय थे – इनमें से पहले आरक्षित विषय थे। निर्वाचित मंत्री के अधिकार क्षेत्र में केवल हस्तांतरित विषय आते थे।

भारत सरकार अधिनियम, 1935 के लागू हो जाने के बाद द्वितंत्र समाप्त कर दिया गया। मंशा यह थी कि प्रांतीय मामलों में इसे प्रांतीय स्वायत्तता तथा दायित्व सौंपा जाए। ब्रितानी भारत की केंद्रीय सरकार तथा भारत की रियासतों के शासकों ने परस्पर मिलकर एक ऐसा संघ बना लिया था जिसमें कुछ दायित्व केंद्र के पास ही रहे। यद्यपि गवर्नरों तथा गवर्नर-जनरल को विशेष क्षेत्रों के दायित्व सौंपे गए थे और उन्हें विवेकाधिकार भी प्राप्त थे, जो सर्वोपरि माने जाते थे। यह व्यवस्था 1947 तक जारी रही थी, जब उसी वर्ष भारतीय स्वाधीनता अधिनियम पारित हुआ था और भारत दो स्वतंत्र उपनिवेशों, भारत तथा पाकिस्तान, में बंट गया था। लेकिन स्वतंत्र उपनिवेशों का दर्जा देर तक जारी नहीं रहा क्योंकि संविधान सभा ने अपने लिए एक संविधान बना लिया था और 26 जनवरी 1950 को भारत एक प्रभुत्वसंपन्न, प्रजातांत्रिक गणराज्य बन गया।

असम के प्रांत बनने से पहले तक असम के इलाकों तथा अनुसूचित जिलों का प्रशासन विनियमों द्वारा किया जाता था, जो बाद में इंडियन कौंसिल एक्ट, 1961 से वैधकृत कर दिए गए थे। यद्यपि विनियम बनाने का अधिकार अस्थायी रूप से वापिस ले लिया गया था, पर जल्द ही इसे भारत सरकार अधिनियम, 1970 के जरिए फिर से लागू कर दिया गया। जब 1874 में असम का गठन हुआ तो अनुसूचित जिला अधिनियम (शेडयूल्ड डिस्ट्रिक्टस एक्ट) (1874 का 4) लागू कर दिया गया था। लेकिन विनियम बनाने का अधिकार बिना किसी बाधा के जारी रहा। कानून बनाना सबसे सरल मामला था। लेफ्टिनेंट-गवर्नर या चीफ कमिश्नर द्वारा तैयार मसौदा गवर्नर-जनरल द्वारा कौंसिल में प्रस्तुत कर दिया जाता था। अनुमोदित हो जाने के बाद नियमों को गजट में प्रकाशित कर देने भर से यही कानून बन जाता। रोचक बात यह है कि कानून बनाने की इस प्रक्रिया का प्रावधान भारत सरकार अधिनियम, 1915 में भी रखा गया था।

तत्कालीन प्रशासन की एक विशेष बात यह थी कि अधिकार सत्ता के पास केंद्रित थे ताकि वह शांति व अच्छे प्रशासन के निमित्त विनियम बना सके। परिषद में गवर्नर-जनरल ब्रितानी भारत के किसी भी क्षेत्र को "पिछड़ा क्षेत्र" घोषित कर सकता था और तब उस पर भारतीय विधायिका का कानून लागू नहीं होता था। यहां यह उल्लेख आवश्यक होगा कि "पिछड़ा क्षेत्र" एक बड़ी इकाई का अंग होता था जो "अपवर्जित क्षेत्र" कहलाता था। भारतीय विधिक आयोग, 1930 की रिपोर्ट में स्पष्ट किया गया है कि "अपवर्जित क्षेत्रों" के लिए विशेष कानून लागू होते हैं, जो "न्यायिक तथा प्रशासनिक प्रक्रिया के सरल व लचीले प्रकार हैं।" बाद में कुछ क्षेत्रों को

"पूर्णतया अपवर्जित क्षेत्र" करार दे दिया गया था और कुछ को आशोधित अपवर्जित क्षेत्र । असम प्रांत का "पिछड़ा क्षेत्र" अपवर्जित क्षेत्र के आशोधित प्रकार का था ।

असम के "पिछड़ा क्षेत्र" होने के संदर्भ में आयोग की टिप्पणी इस समय दिमाग में आ रही है । खासी तथा जयंतिया पहड़ियों का ब्योरा देते हुए कहा गया है कि ये इलाके छोटी रियासतों का समूह हैं, जो अर्ध-स्वतंत्र हैं तथा निर्वाचित सिएमों तथा दरबारों द्वारा प्रशासित हैं । यद्यपि यह ब्रितानी भारत का अंग नहीं थे, पर इन पहाड़ियों की मिश्रित जनसंख्या में से 1,50,000 लोग सिएमों के अधीन तथा 1,00,000 ब्रितानी भारत के अधीन थे । खासी पहाड़ियों के मध्य में स्थित शिलांग का तीन-चौथाई क्षेत्र सिएम का तथा एक-चौथाई ब्रिटेन का था ।

प्रांतीय सरकार का पक्ष यह था कि भारत में लागू किए जा रहे सुधारों के लिए मैदानी इलाकों को अलग रखा जाना चाहिए । सिफारिश यह की गई थी कि इन क्षेत्रों को इससे बाहर रखा जाए – (1) नागा पहाड़ियां, (2) लुशाई पहाड़ियां, (3) उत्तरी कछार पहाड़ियां, (4) मिकिर पहाड़ियां और (5) सीमांत के भूभाग । सिफारिश यह थी कि इन क्षेत्रों का प्रशासन परिषद में गवर्नर-जनरल की ओर से गवर्नर ही देखें ।

खासी, जयंतिया तथा गारो पहाड़ियों के बारे में प्रांतीय सरकार की सिफारिश थी कि इन्हें आंशिक रूप से अपवर्जित क्षेत्र के अंतर्गत रखा जाना चाहिए । खासी पहाड़ियों के सिएम क्षेत्र के बारे राय थी कि इसे प्रांतीय योजना के अंतर्गत नहीं रखा जा सकता क्योंकि तब भारतीय रियासतों के खिलाफ यह वादाखिलाफी होता । सिएम क्षेत्र को "रियासत क्षेत्र" मान लिया गया था ।

रिपोर्ट में असम के कुछ क्षेत्रों को "अपवर्जित" तथा कुछ को "अंशतः अपवर्जित क्षेत्र" कोटियों के अंतर्गत रखा गया था । इसका अर्थ यह निकलता था कि स्वयं गवर्नर "अपवर्जित क्षेत्रों" का प्रशासन संभालेंगे और इन "अपवर्जित क्षेत्रों" के निर्धारण का दायित्व भी उन पर ही होगा । गवर्नर को यह अधिकार भी प्राप्त था कि वह ऐसे किसी भी क्षेत्र के लिए गवर्नर-जनरल की पूर्व अनुमति से "शांति तथा अच्छे प्रशासन" के लिए विनियम बनाएंगे, जो कानून का दर्जा प्राप्त कर लेंगे ।

भारत सरकार अधिनियम, 1935 में क्षेत्रों के इस विभाजन को और भी स्पष्ट कर दिया गया और भारत सरकार (अपवर्जित तथा अंशतः अपवर्जित क्षेत्र) आदेश, 1936 के द्वारा तो यह परिवर्तन पूर्णतया लागू हो गया था ।

अपवर्जित क्षेत्र के अंतर्गत थे :

(1) उत्तर-पूर्व सीमांत (सदिया, बालीपाड़ा और लखीमपुर भूभाग)

(2) नागा पहाड़ियां

(3) लुशाई पहाड़ियां

(4) उत्तर कछार पहाड़ियां (कछार जिले का सब-डिवीजन)

अंशतः अपवर्जित क्षेत्र के अंतर्गत थे :

(1) गारो पहाड़ियां

(2) मिकिर पहाड़ियां (नौगांव तथा शिवसागर जिले)

(3) खासी और जयंतिया पहाड़ियों का ब्रितानी भाग – शिलांग नगरपालिका तथा छावनी को छोड़कर

भारत सरकार अधिनियम, 1935 के लागू करने के बाद संवैधानिक विकास के क्षेत्र की सबसे महत्वपूर्ण घटना यह है कि 1937 में आम चुनाव हुए । प्रांतों में मंत्रालयों का गठन हुआ और असम को चुनाव संबंधी अनुभव प्राप्त हुए । कांग्रेस पार्टी सबसे प्रमुख पार्टी थी । अगले आम चुनाव, जो 1942 में होने थे, द्वितीय विश्व युद्ध की वजह से नहीं हो सके । ये चुनाव 1946 में ही हो सके । प्रांतों के प्रतिनिधि संविधान सभा के लिए भेजे गए । इसका गठन तब हुआ, जब ब्रिटेन ने भारतीयों को सत्ता सौंपने का निर्णय ले लिया, जो स्वतंत्रता का ही संकेतक था ।

संविधान सभा का गठन वास्तव में एक ऐतिहासिक घटना थी । सभा की बैठकें लगभग तीन वर्षों, 9 दिसंबर 1946 से 26 नवंबर 1949, के दौरान होती रहीं । प्रमुख संविधानवादी डा.बी.आर.आंबेडकर को मसौदा समिति का अध्यक्ष चुना गया । भारत अपने लिए कैसा संविधान अपनाएगा ? यही प्रश्न मंडरा रहा था ।

संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका तथा अन्य देशों के संविधानों, का यहां तक कि ग्रेट ब्रिटेन के अलिखित संविधान का भी, बारीकी से अध्ययन किया गया तथा इन पर परिषद तथा समितियों में खूब बहसें हुईं । भारत के विशाल आकार, 40 करोड़ की आबादी तथा नृजातीय, भाषाई, धार्मिक व जातीय वर्गों की विविधता के कारण संविधान-निर्माताओं को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था । ग्यारह सत्रों में खर्च हुए समय तथा 165 दिनों की लंबी अवधि के अलावा विशेष बात यह थी कि इन बहसों का स्तर बहुत ऊंचा तथा सभी विषयों को समेटने वाला रहा । इन चर्चाओं के बाद जो दस्तावेज तैयार हुआ, उसे विश्व के तत्कालीन संविधान विशेषज्ञों तक ने युग-प्रवर्तक संविधान की संज्ञा दी थी । ऐसे संविधान का निर्माण निस्संदेह भारतीय लोगों की महान प्रतिभा का परिचायक था । इन संविधान-निर्माताओं की प्रतिभा के कारण ही संविधान में छठी अनुसूची का समावेश हो सका जिससे उत्तर-पूर्व की जनजातियों को कुछ हद तक स्वायत्तता प्राप्त हो सकी, जो स्वायत्त जिला परिषदों की योजना के रूप में प्रतिबिंबित होती है ।

मसौदा समिति के अध्यक्ष डा. आंबेडकर, जिनकी संविधान निर्माण के जनक के रूप में लोकप्रियता तथा पहचान बनी हुई है, ने बड़ी विनम्रता से स्वीकार किया कि राजनीतिक प्रजातंत्र का एकमात्र आदर्श संसदीय प्रजातांत्रिक प्रणाली के सिद्धांत ही नहीं हैं। उन्होंने यह भी महसूस किया कि जो बात आज एक पीढ़ी के लिए सार्थक है, जरूरी नहीं कि भावी पीढ़ियों के लिए भी सार्थक साबित हो। उन्होंने अपने तर्क के समर्थन में महान अमेरिकी राजनीतिज्ञ जैफ़रसन के इस मत का उल्लेख किया :

"हमें प्रत्येक पीढ़ी को एक अलग राष्ट्र मान लेना चाहिए जिसे यह अधिकार होगा कि बहुमत के आधार पर वह एक बनी रह सके लेकिन आने वाली पीढ़ियों पर यह बंधन लागू नहीं होगा और उन्हें हमें किसी दूसरे देश का निवासी समझना चाहिए।"

शायद इसी गहरे अहसास ने हमारे संविधान-निर्माताओं को इस बात के लिए प्रेरित किया होगा कि संविधान में लचीलापन रहे तथा इसे संशोधित करने की सुविधा बनी रहे। सदन के कुल सदस्यों के बहुमत और सदन में उपस्थित सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से ही मतदान द्वारा संविधान में संशोधन करने का प्रावधान है। यदि किसी संशोधन द्वारा संविधान के किन्हीं अनुच्छेदों तथा विशिष्ट प्रावधानों को बदलने की मंशा जताई गई हो, तब कम से कम आधे राज्यों के विधानमंडलों में एक संकल्प द्वारा इसकी संतुष्टि होनी चाहिए ताकि संशोधन कानून का रूप ले सके।

संशोधन के इस प्रावधान के कारण ही पिछले चार दशकों में संविधान को 70 बार संशोधित किया जा चुका है।* फिर भी, यह साबित हो गया है कि कमियों तथा विभिन्न व्याख्याओं के बावजूद संविधान समय की कसौटी पर खरा उतरा है। यहां तक कि 1975 में लागू आंतरिक आपातकाल तक बहुत समय तक जारी नहीं रखा जा सका था क्योंकि संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप लोगों ने फिर से प्रजातांत्रिक कार्यप्रणाली को अपना लिया था। यह बात भी पक्के तौर से सिद्ध हो चुकी है कि भारतीय जनता के प्रजातांत्रिक चरित्र की जड़ें खूब गहरी हैं और उनके मन में संविधान के प्रति गहरा आदर-भाव है। यह तथ्य कि आम चुनाव प्रायः समय पर हुए हैं, इस बात का सूचक है कि प्रजातांत्रिक संविधान बरकरार है और जो लोग इसके मूल चरित्र को ही बदलना चाहते हैं, उन्हें इसके आगे मात खानी पड़ी है। देश को नष्ट करने अथवा देश में तानाशाही लाने के सभी प्रयासों को विफल कर हमारा संविधान एक प्राचीर बनकर इसकी रक्षा करता है।

भारत की जनता संविधान के निर्माताओं का आभार व्यक्त करती है जिन्होंने हमें ऐसा मजबूत संविधान दिया है।

सन् 2001 तक संविधान में 76 संशोधन किए जा चुके हैं।

संविधान के जनक डा. आंबेडकर ने अपने समापन वक्तव्य में देश के भविष्य को लेकर अपनी आंशका को वाणी दी है। उन्होंने कहा था :

"क्या इतिहास अपने को दुहराएगा ? यही विचार है, जो मेरे मन में आशंका जगा देता है। यह आशंका इस अहसास से और भी अधिक गहरी हो जाती है कि जाति व धार्मिक मतों के पुराने दुश्मनों के अलावा हमारे यहां इतनी राजनीतिक पार्टियां हैं, जो विविध तथा परस्पर-विरोधी विचारधाराओं की पोषक हैं। क्या भारतीय जन देश को अपने धार्मिक विश्वासों से ऊपर रखेंगे अथवा इन धार्मिक विश्वासों से नीचे ? मैं नहीं जानता। लेकिन इतना निश्चित है कि पार्टियां यदि धार्मिक विश्वासों को देश से बड़ा मानेंगी तो हमारी स्वतंत्रता दूसरी बार खतरे में पड़ जाएगी और फिर शायद हमेशा के लिए समाप्त हो जाएगी। इस खतरे से हम सभी को हमेशा चौकस रहना है। हमें अपने खून की आखिरी बूंद तक, इस स्वतंत्रता को बचाने के लिए, कटिबद्ध रहना होगा।"

10

गोपीनाथ बारदोलोई और रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय

अंतःकरण आत्मा की आवाज है, जैसे कि भावावेश शरीर की आवाज है । ये दोनों अक्सर एक-१दूसरे का विरोध करते दिखाई देते हैं ।

–रूसो

मेरा प्रभुत्व वहीं समाप्त हो जाता है, जहां से अंतःकरण का शुरू होता है ।

–नेपोलियन

जैसा कि पिछले अध्यायों में स्पष्ट किया जा चुका है कि इस शताब्दी के पूर्वार्ध में गोपीनाथ बारदोलोई और रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय का जीवन तथा मिशन उत्तर पूर्वी क्षेत्र के दो महान नेताओं की कथा रहा है । देश के इस भाग की रचना एवं स्वरुप को निर्धारित करने के मामले में इनका योगदान सबसे ज्यादा तथा युग-प्रवर्तक रहा है । हालांकि दोनों की नृजातीय पृष्ठभूमि, धर्म तथा पालन-पोषण अलग तरह का था, फिर भी, दोनों में अद्‌भुत तालमेल था ; दोनों ने एकजुट होकर ब्रिटिश शासकों की उस शैतानी चाल को नाकाम कर दिया था, जो उत्तर-पूर्व को बांटकर वहां शासन करने के बारे में थी । दोनों ने इस संपूर्ण क्षेत्र में दूरगामी राजनीतिक परिवर्तन लाने की पहल की थी । दोनों ही प्रसिद्ध राजनीतिक व्यक्तित्व के स्वामी थे और इनमें से एक का मैदानी इलाके, तो दूसरे का पहाड़ी इलाके की जनता पर गहरा प्रभाव था । ये दोनों अपने सभी समकालीनों से बड़े नेता साबित हुए थे । रेवरेंड निकोल्स राय का 12 जून 1883 को खासी पहाड़ियों के शैला ग्राम में एक संपन्न परिवार में जन्म हुआ था, जबकि गोपीनाथ बारदोलोई का जन्म 6 जून 1890 को नौगांव जिले के रोहा ग्राम में एक मध्यम वर्ग परिवार में ।

सन् 1921 बारदोलोई के लिए एक बहुत महत्वपूर्ण वर्ष था । जब महात्मा गांधी अगस्त 1921 में गोहाटी पधारे, गोपीनाथ बारदोलोई, जो तब एक वकील तथा असम

एसोसिएशन के सदस्य थे, उनसे मिले थे। बारदोलोई को गांधी जी से विचार-विमर्श करने का दूसरा अवसर दिसंबर 1921 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अहमदाबाद अधिवेशन के समय मिला। गांधीजी की सलाह तथा निर्देश पर कि असम की हर कुटिया में उन्हें स्वतंत्रता का संदेश पहुंचाना चाहिए, बारदोलोई पूरी तरह से स्वतंत्रता आंदोलन में उतर पड़े। गोहाटी पहुंचते ही वे कैद कर लिए गए और उन्हें तेजपुर जेल भेज दिया गया। बारदोलोई की यह पहली जेल यात्रा थी और उन्हें पूरे एक साल तक कैद में रहना पड़ा।

रेवरेंड निकोल्स राय के राजनीतिक जीवन में भी सन् 1921 का साल एक मील का पत्थर था। वे पुरानी विधान परिषद में असम विधानमंडल के सदस्य निर्वाचित हुए थे। सन् 1906 से ही वह ईसाई मिशनरी के रूप में अपना जीवन बिता रहे थे और ईसा मसीह के संदेश के प्रचार के निमित्त सभी पहाड़ियों तथा घाटियों का भ्रमण कर रहे थे। एक मिशनरी की हैसियत से ही 1913 से 1916 के दौरान उन्हें संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, ब्रिटेन, चीन और जापान जाने का अवसर मिला था। जनसेवा में शामिल होने का यह अवसर एक तरह से उनका नीति-आधारित राजनीति का ही एक व्यापक रूप था। जो भी हो, वे एक सफल लोक नेता तथा उच्च कोटि के राजनीतिज्ञ साबित हुए और 1921 से 1959 तक, जिस वर्ष उनकी मृत्यु हुई, वे लगभग निरंतर असम विधानमंडल के सदस्य रहे (मात्र कुछ वर्षों को छोड़कर) तथा उन्होंने संविधान सभा की कार्रवाई में अपना ऐतिहासिक योगदान दिया।

गोपीनाथ बारदोलोई भी 1921 तक निष्कपट तथा समर्पित राजनीतिक नेता के प्रतीक बन चुके थे। विधानमंडल तथा बाहर के लोकजीवन के कारण उनमें तथा रेवरेंड निकोल्स राय में अच्छी मित्रता हो गई थी। इस मित्रता का एक कारण यह भी था कि दोनों का सामाजिक तथा राजनीतिक कार्य काफी कुछ समान था और दोनों को उत्तर-पूर्व के लोगों की सेवा के मामले में स्पष्ट नीतियों व सिद्धांतों को लेकर एक तरह का भाईचारा महसूस होता था।

इन दोनों के सर्वोत्तम वर्ष शायद 1946 से 1949 तक के थे, जब इन ऐतिहासिक वर्षों में इनके खुले तथा ताकतवर दिमाग असम को बचाने और पहाड़ व मैदान के लोगों के मधुर संबंध बनाने के काम में जुटे हुए थे। तब गोपीनाथ बारदोलोई असम के प्रधानमंत्री थे और रेवरेंड निकोल्स राय उनके वरिष्ठ केबिनेट मंत्री। इन दोनों के सामने एक मिशन था, पाने के लिए एक लक्ष्य था और वे दोनों अपने सामने आने वाली किसी भी चुनौती के आगे कभी नहीं झुके।

यद्यपि दोनों नेता राष्ट्रवादी तथा ऊंचे स्तर के देशभक्त थे, पर उन्होंने अपने

लोगों के पक्ष को बिना किसी डर अथवा लालच के प्रस्तुत करने में कभी कोई संकोच नहीं किया और इस मामले में वे एक-दूसरे के पूरक ही साबित होते थे। बारदोलोई ने निडर होकर पहाड़ के लोगों की आकांक्षाओं को सामने रखा तो रेवरेंड राय ने भी बिना किसी संकोच के असम घाटी के लोगों के साथ होने वाले अन्याय का एक योद्धा की तरह विरोध किया।

द्वितीय विश्व युद्ध (1939-45) की समाप्ति के तुरंत बाद सन् 1945 के अंतिम भाग में ब्रिटेन ने असम को टुकड़ों में बांटने का एक षड्यंत्र रचा था। इसके दो पहलू थे। पहला यह कि पहाड़ी क्षेत्रों को उत्तर-पूर्वी सीमांत सरंक्षित राज्य बना दिया जाए, जो सीधे लंदन के ब्रिटिश शासकों के नियंत्रण में एक ब्रितानी उपनिवेश बन कर रह जाए और इस तरह ब्रिटिश शासकों को यहां अपने पांव जमाए रखने का कारण मिल जाए। दूसरा यह कि असम घाटी के मैदानी इलाकों, सिल्हट तथा कछार जिलों को मिलाकर बंगाल का विस्तार कर लिया जाए। वे असम को कई टुकड़ों में बांट देने की योजना बना रहे थे।

ब्रिटिश संसदीय शिष्टमंडल को 29 जनवरी 1946 को दिए गए अपने लिखित ज्ञापन में रेवरेंड निकोल्स राय ने कहा था कि असम को तोड़ने तथा असम घाटी जिलों व अन्य क्षेत्रों को अलग करने की योजना न्यायसंगत नहीं है। उन्होंने लिखा था : "असम घाटी जिलों के प्रति ऐसा व्यवहार अन्यायपूर्ण होगा ... इसका अर्थ होगा असम की संस्कृति तथा भाषा का लुप्त हो जाना ..." असम को विभाजित करने के पक्ष में ब्रिटिश शासकों ने एक कारण यह गिनाया कि असम कम जनसंख्या व कमजोर अर्थव्यवस्था वाला एक बहुत छोटा-सा प्रांत है। रेवरेंड निकोल्स राय ने इन तर्कों का जोरदार खंडन करते हुए बहुत ही मजबूत दृष्टिकोण प्रस्तुत किया, जो उनके ज्ञान तथा तर्कशक्ति का परिचायक था। उन्होंने कहा : "कुछ लोग ऐसा सोच सकते हैं कि असम घाटी तथा पहाड़ी जिलों को मिलाकर प्रांत नहीं बनाया जा सकता क्योंकि यह बहुत छोटा होगा। इस तर्क में दम नहीं है क्योंकि किसी प्रांत को बनाने का कोई निश्चित आकार अथवा किसी प्रांत को बनाने के लिए कोई जनसंख्या निर्धारित नहीं है।" आस्ट्रेलिया में (वहां की 1943-45 में उन्होंने यात्रा की थी), उनका कहना था, "तस्मानिया की जनसंख्या मेरे ख्याल से केवल 20 लाख है। यह एक राज्य है और अपना अलग गवर्नर निर्वाचित करता है। असम में, पहाड़ी इलाकों सहित, जनसंख्या 70 लाख के लगभग होगी। यह प्रांत बनाने की दृष्टि से काफी बड़ा है। इसके मुकाबले सारे आस्ट्रेलिया की जनसंख्या 75 लाख होगी और वहां कई गवर्नर हैं।" उन्होंने निष्कर्ष निकालते हुए कहा कि "जनसंख्या के आधार पर असम को प्रांत बनाने से नहीं रोका जा सकता।"

गोपीनाथ बारदोलोई ने अपने स्वरूप का असली परिचय तब दिया, जब उन्होंने संविधान सभा में जनजातियों के हितों की लड़ाई लड़ी और खासतौर पर छठी अनुसूची ◌ाजना का जोरदार समर्थन किया जिसके वास्तविक निर्माता रेवरेंड निकोल्स राय ही थे। जनजातियों की पृष्ठभूमि में स्पष्ट करते हुए बारदोलोई ने कहा कि आदिवासी इलाकों में अलगाव तथा विभाजन से जूझते ये लोग किस तरह आर्थिक उपेक्षा के शिकार हैं, अतः उनकी अलग पहचान को स्वीकार करना पूर्णतया न्यायसंगत होगा। वस्तुत: यह एक महत्वपूर्ण मसला था जो सलाहकार उप-समिति के सामने आया था, ◌नके व स्वयं अध्यक्ष थे। बारदोलोई ने साफ-तौर पर कहा कि किसी को भी ◌तियों के ऊपर ताकत आजमाने या फिर उन पर कोई चीज थोप देने का विचार नहीं लाना चाहिए। राज्य की समस्या को सुलझाने के लिए वहां के जनजातीय लो◌ ◌का प्रेमपूर्ण व स्वेच्छा से सहयोग आवश्यक होगा। उन्होंने भावावेश में बोलते हुए कहा कि असम या उत्तर-पूर्व की एकता इस बात पर निर्भर करती है कि शासक किस तरह जनजातियों का विश्वास व भरोसा पाते हैं। बारदोलोई जनजातियों को स्वायत्तता दिलवाने के मामले में अत्यंत मुखर थे। वह स्वयं भी जनजातीय जीवन के प्रशंसक थे और उन्होंने अनेक बार जनजातीय लोगों के प्रति अपने प्रेम व सरोकार को अभिव्यक्ति दी थी। यही कारण था कि उनके नेतृत्व के दौरान पहाड़ तथा मैदान के लोगों में परस्पर सद्भाव व मित्रता बनी रही।

इन दोनों महान नेताओं, गोपीनाथ बारदोलोई एवं रेवरेंड निकोल्स राय, की कर्मठता के कारण असम की एकता बनी रही और जनजातीय लोगों को अपनी संस्कृति व प्रतिभा के आधार पर भारत के संविधान में उल्लिखित स्वायत्त जिला परिषदों के अंतर्गत विकास करने का अवसर प्राप्त हुआ, जिसे नवंबर 1949 में स्वीकृति मिली थी। इन दोनों उत्कृष्ट नेताओं में आपसी समझदारी बिना किसी झंझट के तब तक बनी रही, जब तक कि 5 अगस्त, 1950 की रात्रि को गोपीनाथ बारदोलोई की जीवन-लीला समाप्त नहीं हो गई। उनकी उम्र तब कुल 60 वर्ष की थी। उन्हें स्वायत्त जिला परिषदों की योजना को लागू होते देखने का अवसर नहीं मिल सका जिसके लिए उन्होंने अपने मित्र तथा राजनीतिक विश्वासपात्र रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय के साथ मिलकर संघर्ष किया था।

रेवरेंड निकोल्स राय को अपने इतने अच्छे तथा प्रिय मित्र के न रहने का बहुत सदमा पहुंचा; ऐसा मित्र उन्हें भविष्य में कोई और मिलने वाला नहीं था। कुछ समय तक वे बारदोलोई की मृत्यु से उत्पन्न शून्य को भरने की कोशिश करते रहे।

जनजातीय लोगों के साथ बारदोलोई की निकटता तथा पहचान इतनी मधुर थी

कि विद्रोही नगा नेता ए.जेड. फिज़ो तक ने 1950 में उनके बारे में कहा था :

"कुछ ही लोगों की तरह, बारदोलोई ने वर्षों पहले, घुमड़ते तूफान के बीच नीले आसमान के टुकड़े को देख लिया था। उनकी इस महान दूरदर्शिता तथा इसे पाने के लिए अजस्र योगदान उनके चरित्र की छाप को दर्शाता है, जो न तो उनकी मृत्यु के साथ अथवा न ही समय बीतने के साथ कभी मिट पाएगी। अपने जीवनकाल में बारदोलोई नगाओं के मित्र थे और इसे नगा भी बहुत महत्व देते थे। उनके चले जाने से नगा अब विपन्न हो गए हैं।"

रेवरेंड निकोल्स राय बारदोलोई के बाद लगभग नौ साल जीवित रहे। इस दौरान वे 1952 व 1957 में असम विधान परिषद में चुनकर आए। पर अब पहले वाली बात नहीं रही थी। उनके मुख्यमंत्री बी. आर. मेधी से बुनियादी मतभेद थे और सामाजिक या राजनीतिक दृष्टि से वे उनके साथ निकटता नहीं बना पाए। मेधी के नेतृत्वकाल में रेवरेंड निकोल्स राय ने मंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया था और फिर पर्वतीय क्षेत्र में जनआंदोलन आरंभ करने की नींव रखी अर्थात छठी अनुसूची में व्यक्त स्वायत्तता, जो उनके तथा बारदोलोई के सम्मिलित प्रयासों का फल थी, को ही आधार बनाकर उत्तर-पूर्व में लघु राज्यों का निर्माण करवाया। यदि तब बारदोलोई भी जिंदा होते तो शायद इतिहास के कैनवास पर उत्तर-पूर्व की कोई दूसरी ही तस्वीर उभरती।

दोनों नेताओं में दो चीजें समान थीं – भरपूर कर्तव्यनिष्ठा तथा मिशन की भावना।

11

छठी अनुसूची : कुछ प्रमुख मुद्दे

वे ही सर्वोत्तम कानून हैं जिनसे राजा को महत्वपूर्ण विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं और जनता को श्रेष्ठ स्वतंत्रता मिल पाती है । **–बेकन**

हमें वह सब कुछ कानून द्वारा प्राप्त नहीं करना चाहिए, जो नैतिकता के पालन से मिल सकता है । **–मॉनहेसक्यू**

भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम के बाद ब्रिटिश सरकार का उत्तरदायित्व समाप्त हो गया और असम के जनजातीय क्षेत्रों जैसे कि खासी रियासतों पर इसकी प्रभुता भी रद्द हो गई । भारत के संविधान की छठी अनुसूची में, जो 26 नवंबर 1949 को संविधान सभा द्वारा पारित किया गया था, जनजातीय क्षेत्रों को 20वें पैरा की तालिका में भाग 'क' और 'ख' के अंतर्गत दर्शाया गया है । ये इस प्रकार हैं :

भाग–क

1. संयुक्त खासी-जयंतिया पहाड़ी जिले
2. गारो पहाड़ी जिले
3. लुशाई पहाड़ी जिले
4. नगा पहाड़ी जिले
5. उत्तरी कछार पहाड़ियां
6. मिकिर पहाड़ियां

भाग–ख

1. उत्तर-पूर्व सीमांत भूभाग जिसमें शामिल हैं–बालीपाड़ा सीमांत भूभाग, अबोर पहाड़ी जिला और मिसिंग पहाड़ी जिला
2. नगा जनजातीय क्षेत्र

भाग 'क' में शामिल जिले स्वायत्त जिले थे, जहां जिला परिषदों का गठन किया

जाना था। भारत के संविधान को अंगीकार कर लेने के बाद नगा पहाड़ी जिले को छोड़कर शेष जिलों में 1950 के दशक के शुरू में जिला परिषदों का विधिवत गठन कर दिया गया था। नगा लोगों की महत्वाकांक्षाओं के कारण नगा पहाड़ियों को उथल-पुथल तथा अनिश्चय का सामना करना पड़ा क्योंकि नगा लोग भारत से अलग होकर स्वतंत्र रहना चाहते थे। पर यह संघर्ष देर तक जारी नहीं रहा क्योंकि जुलाई 1960 में भारत सरकार तथा नगा पीपुल्स कन्वेंशन के नेताओं के मध्य समझौता हो गया। समझौते के अंतर्गत भारत संघ में नगा पहाड़ियों – टुवेनचंग क्षेत्र (नगालैंड) एक अलग राज्य के रूप में गठित किया जाना था।

इस समझौते में यह प्रावधान भी था कि भारत सरकार का उत्तरदायित्व होगा :

1. राज्य की कानून और व्यवस्था की तब तक देखरेख, जब तक इस क्षेत्र के भीतर विद्रोही गतिविधियों के कारण अशांति रहती है ;
2. भारत सरकार द्वारा नए राज्य को कोष उपलब्ध कराना ; और
3. दस वर्षों तक टुवेनचंग जिले का प्रशासन संभालना।

सबसे महत्वपूर्ण यह कि किन्हीं विषयों के लिए नगालैंड पर संसदीय अधिनियम निर्णय तब तक लागू नहीं होंगे, जब तक कि नगालैंड विधानसभा तत्संबंधी निर्णय न ले ले। सबसे पहले तो नगालैंड (संक्रमण राज्य) विनियम, 1961 लागू किया गया, पर बाद में इसे नगालैंड राज्य अधिनियम, 1962 में बदल दिया गया जिसमें नगालैंड राज्य गठित करने का प्रावधान था।

रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय इसे पहले से ही भांप गए थे कि जिला परिषदें जनजातियों को स्वायत्तता दिलवाने में पुरोगामी भूमिका अदा करेंगी। परिषदों के कारण इन क्षेत्रों में नया नेतृत्व उभरा और जिला परिषदों के जरिए ही शक्ति व उत्तरदायित्व का स्वाद चख लेने के बाद नेतृत्व भी, मोटे तौर पर, लोगों की महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए व राजनीतिक लक्ष्य को पाने के मामले में जिम्मेदार तथा व्यावहारिक बन पाया था।

सबसे पहले खासी, जयंतिया और गारो लोगों ने अपनी मांग को अभिव्यक्ति दी। अलग राज्य की मांग पहले तो स्वायत्त राज्य के गठन, जिसमें संयुक्त खासी पहाड़िया, जयंतिया पहाड़ियां एवं गारो पहाड़ियां शामिल थीं, में परिणत हुई। संविधान (22वां संशोधन) अधिनियम, 1969 के अंतर्गत नया अनुच्छेद 244 ए जोड़ कर लागू किया गया। इसके अंतर्गत स्वायत्त राज्य का गठन किया जाना था जिसकी अपनी विधानसभा तथा मंत्रिमंडल होने थे। यह निर्णय एक नए विचार पर आधारित था कि राज्य के बीच एक राज्य का निर्माण यानी असम राज्य में मेघालय स्वायत्त राज्य।

लेकिन लोग नए स्वायत्त राज्य तक ही ठहर नहीं गए बल्कि उन्होंने पूर्ण राज्य के निर्माण के लिए अपने प्रयास जारी रखे । ऐसा उत्तर-पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 के कारण संभव हो सका और भारत संघ के अंतर्गत मेघालय को पूर्ण राज्य का दर्जा दे दिया गया । शिलांग, जो पहले असम की राजधानी था, अब मेघालय की राजधानी बना और अब यह असम का हिस्सा नहीं रहा ।

लुशाई पहाड़ी जिला ने अपनी अलग राह पकड़ी । पहले इसे नया नाम मिजो जिला दिया गया और छठी अनुसूची में इसी नाम को लुशाई पहाड़ी जिला के स्थान पर इस्तेमाल किया गया । तब उत्तर-पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के अंतर्गत मिजो जिले को मिज़ोरम संघ क्षेत्र बना दिया गया और यह भी असम राज्य का हिस्सा नहीं रहा । इसी अधिनियम के अंतर्गत मणिपुर संघ और त्रिपुरा भी पूर्ण राज्य घोषित कर दिए गए । अरुणाचल संघ राज्य के गठन के बाद असम से कुछ और क्षेत्र भी अलग हो गए जो छठी अनुसूची में भाग 'ख' के अंतर्गत शामिल थे । इस तरह असम कई हिस्सों में बंट गया लेकिन उत्तर-पूर्व क्षेत्र की सात बहनों में वही सबसे बड़ी बहन बना । अन्य बहनें हैं – नगालैंड, मेघालय, मणिपुर, त्रिपुरा, मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश ।

जहां तक छठी अनुसूची का संबंध है, इसमें बार-बार परिवर्तन किए गए ।

भारत के संविधान में शामिल छठी अनुसूची को लागू करके ऐसा विशेष प्रावधान किया गया था ताकि दूर-दराज के क्षेत्रों का शासन चलाया जा सके, जहां के लोग अपनी विशिष्ट सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के कारण संभवतया देश के शेष भाग की परंपरा तथा इतिहास के मामले में उनसे भिन्न हैं । इसमें अनिवार्यतया कुछ समस्याएं आनी ही थीं । ऐसी दो समस्याओं के समाधान के लिए बुद्धिमत्ता तथा विशेष प्रयास जरूरी थे । पहली, स्वायत्त क्षेत्रों में गवर्नर द्वारा अपने दायित्वों को निभाने के सिलसिले में अपनाई गई भूमिका को लेकर यानी स्पष्ट शब्दों में यदि कहें तो जिला परिषद द्वारा लिए गए उन निर्णयों के बारे में जिस पर गवर्नर का अनुमोदन अथवा हस्तक्षेप जरूरी है । छठी अनुसूची में यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि गवर्नर को मंत्रिमंडल की सलाह व सहयोग पर एक संवैधानिक गवर्नर की तरह काम करना चाहिए या मंत्रिमंडल से स्वतंत्र रहकर । अनुसूची में गवर्नर को निर्णय लेने के मामले में अंतिम निर्णायक का दायित्व सौंपा गया है, पर क्या यह निर्णय विवेकाधीन हो सकता है ? इस व्याख्या को लेकर संविधान के पंडित काफी परेशान रहे हैं लेकिन व्यावहारिक स्तर पर जिला परिषद के प्राधिकारी मंत्रिमंडल के निर्णय के विरुद्ध कार्रवाई करने को उत्सुक दिखाई नहीं देते ।

दूसरी समस्या परिषदों के प्रशासन को कोष प्रदान करने को लेकर है तथा परिषद के अधीन आने वाले इन क्षेत्रों के विकास के मामलों में एजेंसी की भूमिका से संबंधित है । जिला परिषदें संविधान के अनुरूप ही गठित की गई हैं, अतः सरकार को ही, चाहे केंद्र स्तर पर हो या राज्य स्तर पर, परिषद के प्रशासनिक व्यय का भार उठाना चाहिए । तब क्या इसका अर्थ यह हुआ कि भारत सरकार का कर्तव्य बनता है कि वह प्रशासनिक व्यय के लिए वित्त आयोग को इस कोष के लिए विशेष प्रबंध करने का सुझाव दे ?

जहां तक विकास कार्य का संबंध है, यही देखने में आता है कि राज्य सरकार तथा जिला परिषद दोनों ही राज्य सरकार के कोष से विकास कार्य करती हैं जिसकी प्रमात्रा क्षेत्र तथा समयानुसार अलग-अलग रही है ।

छठी अनुसूची ने, पिछले वर्षों में हुए संशोधनों सहित, राज्य के हितों तथा जिला परिषद क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के हितों के परस्पर संबंधों को लेकर एक नए प्रत्यय को जन्म दिया है । इसने संवैधानिक प्रावधान से बदलकर राजनीतिक आंदोलन का रूप ले लिया । हमारा संकेत करबी लोगों (मिकिर) के आंदोलन की तरफ है, जो छठी अनुसूची के प्रावधानों के आधार पर संविधान के अनुच्छेद 244 के अंतर्गत स्वायत्त राज्य की मांग कर रहे हैं ।

क्या भारत के विभिन्न भागों में, असम के बोडो क्षेत्र सहित, उठ रहे राजनीतिक आंदोलनों के समाधान के लिए संविधान की छठी अनुसूची को संविधान की भावना और स्वरूप के अनुरूप लागू किया जा सकता है ? इसके उत्तर के लिए तो हमें भविष्य की प्रतीक्षा करनी होगी ताकि पता चल सके कि इतिहास इस बारे में क्या रुख अपनाता है ।

12

उनका अंतिम दशक

मनोहर एवं गौरवपूर्ण बुढ़ापा अमरता का शैशव होता है ।

–पिंडर

अच्छी तरह बिताए गए जीवन की शाम अपने साथ दीपकों को भी लाती है ।

–ज्यूबर्ट

भारत के संविधान में भारत को गणतंत्र घोषित किया गया था और संविधान निर्माण की प्रक्रिया में रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय की भूमिका उल्लेखनीय रही थी । इससे उन्हें असीम संतोष मिला था । इस उपलब्धि के बाद तो उनकी खुशी की कोई सीमा नहीं रही ।

उन्हें तब गहरा धक्का लगा, जब मृत्यु ने उनके हमवतन मुख्यमंत्री गोपीनाथ बारदोलोई को उनसे छीन लिया क्योंकि राजनीतिक तथा सामाजिक स्तरों पर इन दोनों में परस्पर अच्छी समझ थी । इस शून्य से स्थितियां ऐसी बन गई थीं कि रेवरेंड निकोल्स राय का नाम राज्य के अगले प्रमुख के रूप में लिया जाने लगा । पर स्पष्ट कारणों से ऐसा नहीं हुआ और तब इस बात की चर्चा गरम हो उठी कि उन्हें वरिष्ठता में दूसरा स्थान दिया जाएगा । राज्य के प्रमुख के रूप में बिष्णुराम मेधी के आ जाने तथा असम के जुझारूपन पर आधारित नई गतिशीलता के कारण विभिन्न समुदायों में पहले से व्याप्त पारंपरिक आदर-भाव की जगह नहीं रही और अंततः रेवरेंड निकोल्स राय तक की उपेक्षा की गई । इस तरह प्रशासन की एक नई शैली की शुरुआत हो गई ।

देश की स्वतंत्रता के बाद भारत के संविधान के अधीन पहले आम चुनाव 1952 में आयोजित हुए । रेवरेंड निकोल्स राय ने शिलांग की आम सीट से चुनाव लड़ा । शुरू में मुकाबला कड़ा था । लेकिन रेवरेंड निकोल्स राय मंजे हुए राजनीतिज्ञ तथा संगठनकर्ता थे और उन्होंने युवा तथा उभरते हुए राजनीतिज्ञ व अपने निकटतम

प्रतिद्वंद्वी प्रो.जी.एस. स्वैल को हराकर सम्मानजनक जीत हासिल की । लेकिन अब रेवरेंड निकोल्स राय के लिए जीवन वैसा नहीं रहा, जैसा कि पहले था । उनके मुख्यमंत्री मेधी से मतभेद और भी अधिक गहरे हो गए और इनके बीच की दूरी को पाटना मुश्किल हो गया । पहले उन्हें एक बड़े विभाग, लोक निर्माण के संचालन का उत्तरदायित्व दिया गया था, फिर उन्हें अचानक आबकारी विभाग दे दिया गया और तब उन्हें बहुत ही घृणित तरीके से जेलों का दायित्व सौंप दिया गया । रेवरेंड निकोल्स राय के साथ जिस भद्दे तरीके से व्यवहार किया जा रहा था, इस बारे में उन दिनों एक किस्सा प्रचलित हो गया था । यह किस्सा सुरुचिपूर्ण नहीं है, लेकिन इसका यहां उल्लेख इसलिए किया जा रहा है ताकि इस बात का अनुमान लगाया जा सके कि रेवरेंड निकोल्स राय को किस तरह अपमानित किया जा रहा था । किस्सा कुछ इस तरह से है :

एक आदमी सड़क (पी.डब्ल्यू डी.) पर जा रहा था कि उसे शराब की दुकान (आबकारी) की तरफ धकेल दिया गया । उसने यहां जरूरत से ज्यादा शराब पी ली तो उसे नशा चढ़ गया । पुलिस ने उसे धर दबोचा और हवालात (जेल) में बंद कर दिया । पी.डब्ल्यू डी. से आबकारी और फिर जेल विभाग ।

बूढ़े शेर के लिए इतना कुछ सह पाना संभव नहीं था ; रेवरेंड निकोल्स राय तब 69 वर्ष की अधेड़ उम्र के थे । उन्होंने भारत की जनता को कितना कुछ दिया था, असम के लोगों की विशिष्ट सेवा की थी और इसके बाद भी ... इसके अलावा जिन जिला परिषदों के निर्माण के वे जनक रहे थे, वे अब फलीभूत हो रही थीं और जनजातियों में अधिक स्वायत्तता की मांग अभूतपूर्व तरीके से बढ़ चली थी और इसके बाद भी... नेतृत्व के मामले में रेवरेंड निकोल्स राय को इस बात का संतोष था कि स्वायत्त जिला परिषदों के कारण दो प्रमुख नेता सामने आ सके – एक, भूतपूर्व नौकरशाह जे. रिनजाह जो खासी-जयंतिया स्वायत्त जिला परिषद के प्रमुख थे और दो, युवा तथा गतिशील गारो नेता कैप्टेन डब्ल्यू.ए.संगमा, जो गारो पहाड़ियों की जिला परिषद के पहले प्रमुख कार्यपालक सदस्य बने थे और अत्यंत सफल साबित हुए थे । यह सोचकर कि यह समय कर्म करने का है, रेवरेंड निकोल्स राय ने मंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया और स्वयं को और अधिक स्वायत्तता मांगने वाले आंदोलन के साथ जोड़ लिया । असम के कई हिस्सों में बंट जाने से 1953-54 में रेवरेंड निकोल्स राय खुद को इस बात के लिए राजी नहीं कर पाए थे कि जनजातियों के लिए पहाड़ी राज्य राजनीतिक लक्ष्य होना चाहिए । उन्होंने हमेशा असम की एकता तथा अखंडता के लिए संघर्ष किया था ।

पहाड़ी तथा मैदानी लोगों के हितों के लिए लंबे समय तक संघर्ष करते रहने के बाद उनके लिए एक ऐसे आंदोलन का हिस्सा बनना बहुत ही कठिन था, जो इन हितों को एकाएक समाप्त कर दे। पहाड़ी राज्य बनने का अर्थ मैदान के अपने भाइयों से इनका अलगाव होता, जो बहुत तकलीफदेह होता। यद्यपि 1954 में उन्होंने क्षेत्रीय जनजातीय पार्टी, पूर्वी भारत जनजातीय यूनियन (ईस्टर्न इंडिया ट्राइबल यूनियन) के गठन के लिए अपनी स्वीकृति तथा आशीर्वाद दिया था लेकिन इस बारे में उनके कई प्रकार के संकोच थे। वह किसी ऐसे नए राजनीतिक फार्मूले की तलाश में थे जिससे पहाड़ी तथा मैदानी लोगों का, असम तथा पहाड़ी क्षेत्रों का संपर्क बना रहे। रेवरेंड निकोल्स राय ने पहाड़ी राज्य के बजाय पर्वतीय मंत्रालय बनाने का सुझाव दिया ; लेकिन जनता में यह विचार जोर नहीं पकड़ सका। बुद्धिजीवियों तथा उनके कुछ कट्टर अनुयायियों ने जरूर इसका समर्थन किया। "जब तक पहाड़ी राज्य नहीं, तब तक आराम नहीं" का नारा पहली बार असम के पहाड़ी क्षेत्र में गूंजा और जनजातीय लोगों की आकांक्षाओं को वाणी देने के लिए पूर्वी भारत जनजातीय यूनियन को व्यापक स्वीकृति मिल गई। बंद तथा हड़तालों का आयोजन किया गया और यहां की पहाड़ियां पहाड़ी राज्य की मांग से गूंज उठीं। इसका नेतृत्व कैप्टन डब्ल्यू.ए.संगमा ने संभाला। रेवरेंड निकोल्स राय ने इससे किनारा कर लिया और शांत बने रहे।

जनजातीय लोगों के हित को लेकर 1957 के आम चुनाव बहुत महत्वपूर्ण बन गए थे। पूर्वी भारत जनजातीय यूनियन ने इसे चुनौती के रूप में लिया और संसद तथा असम विधानसभा दोनों के लिए अपने उम्मीदवार खड़े किए। जनता की इच्छाओं को वाणी देने वाली यूनियन की भारी जीत संभावित थी और ऐसा ही हुआ भी, पर इसका एक अपवाद भी था। रेवरेंड निकोल्स राय ने अपने सिद्धांतों, मूल्यों तथा आदर्शों के सहारे एक बार फिर जनमत को जीतने की कोशिश की। वह पूर्वी भारत जनजातीय यूनियन के खिलाफ चेरा संसदीय क्षेत्र से खासी-जयंतिया नेशनल कांफ्रेंस की टिकट पर चुनाव लड़ने के लिए मैदान में उतर आए। उनकी उम्र 74 वर्ष की हो चुकी थी। लेकिन उनके पास जो कुछ भी था, उसी के सहारे वह मैदान में थे और समृद्ध अनुभव व राजनैतिक कौशल उनकी ताकत थे। उनकी सभाओं में अब पुराने दिनों की तरह भीड़ इकट्ठी नहीं होती थी। नया विचार लोगों के दिलोदिमाग पर हावी था। लेकिन रेवरेंड निकोल्स राय मैदान में दृढ़ता से डटे रहे। बिना थके लगभग अकेले ही उन्होंने अपना संघर्ष जारी रखा। ज्यादातर लोगों का ख्याल था कि रेवरेंड निकोल्स राय के लिए यह वाटरलू की लड़ाई साबित होगा। लेकिन चुनाव के परिणाम से इस स्पष्टवादी व सही बात पर अड़े रहने वाले व्यक्ति ने राहत की सांस ली। उन्हें चुनाव में रोमांचक जीत

हासिल हुई थी। उन्होंने जनजातीय यूनियन के उम्मीदवार टी.काजी को मात्र 188 मतों से पराजित किया था। रेवरेंड निकोल्स राय के बारे में कहा गया कि बेशक बूढ़ा शेर गरजा नहीं लेकिन उसके कुछ मजबूत दांत व तेज पंजे अभी सही सलामत हैं। यह निस्संदेह एक वैयक्तिक जीत थी। क्षेत्र के हितों ने रेवरेंड निकोल्स राय को त्याग दिया था। जनजातीय यूनियन अब एक नई शक्ति थी और "पहाड़ी राज्य" लक्ष्य बना हुआ था – जनजातीय लोगों का मक्का।

योद्धा कभी नहीं मरता। रेवरेंड निकोल्स राय के साथ भी यही सच था। आम चुनावों के बाद उनकी पार्टी ने खासी-जयंतिया पहाड़ियों की स्वायत्त जिला परिषद का चुनाव लड़ा था। उनकी पार्टी के उनके सहित कुछ अन्य उम्मीदवार ही चुनाव जीते। रेवरेंड निकोल्स राय जिला परिषद में विपक्षी बैंच पर बैठकर भी संतुष्ट थे क्योंकि असम के जनजातीय लोगों के लिए इस संवैधानिक व्यवस्था का निर्माण एवं परिकल्पना उन्हीं की थी।

सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में वह उतना ही कठोर श्रम कर रहे थे जितना वह किया करते थे लेकिन अब बढ़ती उम्र के तकाजे भी थे। 1 नवंबर 1959 को उनकी मृत्यु हो गई। उनकी अंत्येष्टि में शामिल होने के लिए दूर-दूर से हजारों प्रशंसक तथा मित्र आए। इन लोगों ने अपने जीवनकाल में कोई दूसरा इतना बड़ा आदमी नहीं देखा था और भारत के इस सपूत को अपनी श्रद्धांजलि देने के लिए ही वे यहां आए थे। उनकी आत्मा को शांति मिले !

अनुचिंतन

रेवरेंड जे.जे.एम.निकोल्स राय के जीवन और कार्यों का अनुचिंतन करते हुए ध्यान आता है कि जन कार्यों के कुछ क्षेत्रों में वे श्रेष्ठ थे, उन्हें हम उनके जीवन की उपलब्धि घोषित कर सकते हैं। मस्तिष्क में उनके बुद्धिजीवी, औरों से भिन्न बुद्धिजीवी, होने की बात सबसे पहले आ रही है। उनमें लोगों की बात को समझने की नैसर्गिक क्षमता थी और अपने विचारों को अभिव्यक्त करने तथा उसके लिए सहमति जुटा लेने के मामले में भी वे अत्यंत निपुण थे। वे बाहरी तौर पर तटस्थ दिखाई देने पर भी जनजातीय लोगों की प्रेरणाओं व आकांक्षाओं से न केवल बौद्धिक स्तर पर बल्कि शारीरिक स्तर पर भी पूरी तरह जुड़े हुए थे। मुझे एक घटना की याद आ रही है। जब वे बुजुर्ग हो चुके थे, शायद जीवन के छठे दशक के आखिरी वर्षों में, तो अपने चुनाव के प्रचार के लिए सीमावर्ती क्षेत्रों की यात्रा कर रहे थे। उनके प्रशंसकों ने आग्रह किया कि वे ऐसी यात्राएं न करें क्योंकि रास्ते खतरनाक ढंग से चढ़ाई वाले थे और उन्हें पैदल ही चलना पड़ता था। उन्होंने यह बात मान ली। लेकिन वे काफी नीचे बहती नदी के किनारे रहने वाले अपने लोगों से मिलने के लिए भी कटिबद्ध थे। इसलिए क्षेत्र के कुछ मजबूत लोगों को बुलाया गया ताकि वे उन्हें एक बड़ी टोकरी में बिठाकर तथा अपने कंधों पर उठाकर नीचे ले जाएं। इससे प्रकट होता है कि वे अपने लोगों में सशरीर उपस्थित होने में विश्वास करते थे और इसके लिए किसी भी बाधा या अड़चन को आड़े नहीं आने देते थे। वस्तुतः वे लोगों से जुड़े हुए बुद्धिजीवी थे। वे चिंतक, लेखक और पाठक थे। उनके पुस्तकालय में अनेक विषयों की पुस्तकें थीं। उनकी ज्ञान की पिपासा कभी शांत नहीं हुई और सामान्यतया उनकी दिनचर्या यह थी कि मुर्गे की बांग देने तक अपने अध्ययन-कक्ष में पढ़ते रहते थे। जब वह आम लोगों से मिलते तो उच्च बौद्धिक स्तर से आम आदमी के स्तर पर नीचे उतर आने की भी उनमें अद्भुत क्षमता थी और उनकी ही भाषा में अपनी बात कहने में उन्हें कोई कठिनाई महसूस नहीं होती थी।

अपने गहन अध्ययन तथा व्यापक ज्ञान के कारण वे संविधान के मामलों के विशेषज्ञ बन गए थे। उनका लेखन कानून की बारीकियों को समझने की उनकी

योग्यता व प्रतिभा का परिचायक है और साथ ही ठीक जगह पर ठीक शब्दों के प्रयोग की दक्षता का भी। वे बहुत सतर्क व्यक्ति थे और संविधान के किसी भी बिंदु पर तब तक काम करते रहते थे, जब तक संतुष्ट नहीं हो जाते थे। असम परिषद तथा भारत की संविधान सभा में उनका योगदान उनकी कुशाग्र बुद्धि तथा संवैधानिक कानून की समझ का प्रमाण है। अपनी इस पृष्ठभूमि के कारण ही वे संविधान की छठी अनुसूची का मौलिक मसौदा तैयार कर सके, जो बाद में अन्य संविधान निर्माताओं द्वारा संपादित व परिष्कृत किया गया और अंततः संविधान का अंग बना। उन्होंने असेंबली के लिए अनेक विधेयक तैयार किए और इस काम के लिए उन्होंने जैसी सावधानी बरती, वह उनकी तेज तथा विलक्षण बुद्धि का ही परिचय देती है।

उनका जीवन अत्यंत अनुशासित था। वे शराब आदि नशीले पदार्थों का सेवन नहीं करते थे और उनकी निजी आदतें कुछ ऐसी थीं कि कठोर अनुशासन उनके जीवन का प्रमाण-चिह्न बन गया था। समय उनके लिए बहुत कीमती था। वे अपनी डायरी में अपने नित्य के कार्यक्रमों को लिख लिया करते थे और इसका निष्ठा से पालन करते थे। उनका निजी चरित्र सभी के लिए आदर्श था। पहनावे के मामले में भी वे सुसज्जित रहते थे तथा परिधान के रंग व गुणवत्ता पर उनकी निगाह रहती थी।

वे एक राजनीतिज्ञ थे, अपने जीवन व भारत के लोगों के लिए उनमें एक सूक्ष्म दृष्टि थी। उन्हें मालूम था कि भारत का भविष्य संवैधानिक साधनों के प्रयोग, अहिंसा के पालन तथा धर्म-निरपेक्षता पर निर्भर करता है। वह राष्ट्रवादी भारतीय थे। मुझे हमेशा इस बात का अहसास रहा है कि रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय यदि नहीं हुए होते और लोगों का उनमें विश्वास नहीं रहता, तो जनजातियों की नियति पूर्वी पाकिस्तान या आज के बंगलादेश में कहीं निर्धारित हो रही होती।

वे एक अप्रतिम धार्मिक नेता थे और उनका ईसा मसीह के संदेश में इतना गहरा विश्वास था कि कभी-कभी मुझे लगता है कि रेवरेंड निकोल्स राय सच्चे धार्मिक व्यक्ति पहले थे, इसके बाद जनसेवक व सामाजिक कार्यकर्ता। वे उच्च कोटि के धर्म-उपदेशक थे और चर्च लीडर के रूप में सारे देश में उन्हें मान्यता प्राप्त थी। आज चर्च ऑफ गॉड उनके आध्यात्मिक व्यक्तित्व तथा ईश्वर के काम के प्रति उनके समर्पण का स्मारक बना हुआ है।

चाहे प्रांतीय सभा हो या संविधान सभा, उन्होंने स्वयं को योग्य सांसद के रूप में स्थापित कर लिया था। वे अपने विचार बहुत स्पष्ट तथा सुबोधगम्य तरीके से प्रस्तुत करते थे। अपने विपक्षियों से असेंबली में उनकी शाब्दिक नोंक-झोंक बहुत

सीख देने वाली है। इस तलवारबाजी के दस्तावेज एक खजाने से कम नहीं हैं।

मैं रेवरेंड जे.जे.एम.निकोल्स राय को कभी भूल नहीं सकता क्योंकि उन्होंने हम लोगों के लिए नए परिदृश्य उजागर किए थे। उन्होंने एक खुले तथा मानवतावादी दृष्टिकोण से हमारा परिचय करवाया और साथ ही अपनी जड़ों के लिए गर्व करने का बोध भी दिया था। खासी जनजाति तथा भारतीय व्यक्तित्व में उन्होंने एक संश्लेष उत्पन्न करने का प्रयास किया, जिससे वे विशिष्ट भारतीय राष्ट्रवादी तथा खासी देशप्रेमी बन सके। इस विशिष्टता का वर्तमान पीढ़ी को उत्साह से अनुसरण करना चाहिए। इन सबसे बढ़कर यह कि संविधान सभा में जब वे बोलते थे तो केवल भारत के लिए नहीं बल्कि समस्त मानवता को संबोधित होते थे। उनका कैनवास सार्वजनीन था। रेवरेंड जे.जे.एम.निकोल्स राय के जीवन की विशेष बात इस योग्यता में निहित थी कि उन्होंने राजनीति में उच्च नैतिक मूल्यों का समावेश किया था। रेवरेंड निकोल्स राय के लिए जन सेवा तथा नैतिक सिद्धांत के बीच की विभाजक रेखा बहुत पतली थी। उनके लिए यह एक ही सिक्के के दो पहलू थे।

संदर्भ–सूची

1. रेवरेंड जे.जे.एम.निकोल्स राय के सुपुत्र श्री एस.डी.डी.निकोल्स राय के साथ साक्षात्कार

2. **दी खासीज़ अंडर ब्रिटिश रूल** (1824-1947), लेखक – *हेलेन गिरि*

3. श्री आर.टी.रिंबाई, आई.ए.एस. (अवकाशप्राप्त) से साक्षात्कार

4. **बिल्डर्ज़ ऑफ माडर्न इंडिया : गोपीनाथ बारदोलोई,** लेखक – *बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य*

5. रेवरेंड मूर्स डब्ल्यू. लालू से साक्षात्कार

6. **दी फिफ्थ एंड सिक्थ शेडयूल्ज़ टू दी कांस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया,** लेखक – *एम. हिदायतुल्ला*

7. **हिस्ट्री ऑफ क्रिश्चियन चर्च,** लेखक – *रेवरेंड जे.जे.एम.निकोल्स राय*

शिवम् ऑफसैट प्रेस, ए-12/1, नरायणा इंडिस्ट्रयल एरिया, फेज-I, नई दिल्ली 110 028 द्वारा मुद्रित